।। सतगुरू मेहर को अंग ।।
मारवाडी + हिन्दी
(१–१ साखी)

महत्वपूर्ण सुचना–रामद्वारा जलगाँव इनके ऐसे निदर्शन मे आया है की,कुछ रामस्नेही सेठ साहब राधाकिसनजी महाराज और जे.टी.चांड्क इन्होंने अर्थ की हुई वाणीजी रामद्वारा जलगाँव से लेके जाते और अपने वाणीजी का गुरु महाराज बताते वैसा पूरा आधार न लेते अपने मतसे,समजसे,अर्थ मे आपस मे बदल कर लेते तो ऐसा न करते वाणीजी ले गए हुए कोई भी संत ने आपस मे अर्थ में बदल नही करना है । कुछ भी बदल करना चाहते हो तो रामद्वारा जलगाँव से संपर्क करना बाद में बदल करना है ।

* बाणीजी हमसे जैसे चाहिए वैसी पुरी चेक नही हुअी,उसे बहुत समय लगता है। हम पुरा चेक करके फिरसे रीलोड करेंगे। इसे सालभर लगेगा। आपके समझनेके कामपुरता होवे इसलिए हमने बाणीजी पढनेके लिए लोड कर दी ।

|| अथ सतगुरू मेहर को अंग लिखंते ||

कुन्डल्या ||

मन रिज्यां से ने बणे || ना मुख कहियां जोय ||
ओ अर्थ दीठा तोल हम || लाख द्वाई मोय ||
लाख द्वाई मोय || निज मन रिज्याँ भाई ||
बणे सिषा मे रीत || ओ सब भ्रम ऊपाई ||
सुखराम क्हे मो बस नही || निज मन न्यारो होय ||
मन रिंज्या सूं ना बणे || ना मुख कहिया जोय ||१||

सतगुरुके मनके खुशी होनेसे या मुखसे तुझपे मेरी मेहर हो गयी यह कह देनेसे सतगुरु की मेहर नही होती यह शिष्य तुम समजो। मुझे लाख शपथ है,यह अर्थ तोल नापकर ज्ञान विज्ञान न्याय दृष्टीसे मैने देखा और मुझे दिखाई दिया की शिष्यके उपर सतगुरु की मेहर सतगुरु का निजमन खुश होने पे ही होती। सतगुरु का निजमन खुश करने की विधी छोड्कर अन्य कोई भी विधी से या सभी विधीयोसे सतगुरु की मेहर होगी यह समजना भ्रम है,झूठ है। आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज कहते है सतगुरु का निजमन सतगुरु के देह,मन तथा जीव से न्यारा है। इसलिये यह सतगुरुका निजमन सतगुरु के जीव,मन तथा देहके बसमे नही है। इसलिये सतगुरु का मन रिजनेसे या सतगुरुके मुखसे कहनेसे शिष्य मे सतशब्द प्रगट होने की रीत नही बनती ।।।१।।

कवत ||

जो रिंजावे सतगुरू || सिष ज्यूं त्यूं कर आणी ||
तो घट जागत नांव || बार लागे नही प्राणी ||
तिणे मेर लग बात || अरथ रिजर मन लावे ||
उण पुळ पलक बिचार || बीज केवळ घट आवे ||
सुखराम क्हे कारण नही || मुख केणे को कोय ||
निज मन रिज्यां मेर रे || तुरत सिष पर होय ||२||

सतगुरु याने सतगुरु का शरीर नही,सतगुरु का मन नही,सतगुरुके पांच आत्मा नही तथा सतगुरुका जीव नही। सतगुरु याने सतगुरुमें सतगुरुरुपी सतशब्द,सतगुरुरुपी निजनाम, सतगुरुरुपी अखंडीत ध्वनी है। ऐसे सतगुरुरुपी सतशब्दका,ऐसे निजनामका ऐसे अखंडीत ध्वनीका निजनाम शिष्य जैसे तैसे करके रिजायेगा तो शिष्यके घटमें निजनाव जागृत होने को थोडी भी देर नही लगेगी। शिष्य यह तब कर सकेगा जब वह शिष्य अपने प्राणको मायारुपी मन मायासे निकालेगा तथा पांच आत्माके वासनासे निकालेगा तथा रजोगुण, तमोगुण,सतोगुण इस त्रिगुणी माया से निकालेगा और जो आदि से अप्रगट सतशब्द है उसमे अपना निजमन झोकेगा। यह समज लाने के लिये एखाद शिष्य को तिनके सरीखी समज भी काम आ जायेगी या एखाद शिष्यको मेरु पर्वत सरीखी बहोत समज लानी

पडेगी । ऐसे समज पे सतगुरुका निजमन रिजेगा ऐसा शिष्यका निजमन अपने आप ज्ञानसे बन जायेगा और शिष्य सतगुरुका निजमन प्रसन्न करा लेगा । ऐसा होते ही उसी पुल पलकमें मतलब आँखें बंद करके खोलनेको समय लगता उतने देर में केवलका बीज शिष्यमें जागृत हो जायेगा। आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज शिष्यको कहते है की,ऐसा होने पे सतगुरु को शिष्यको मुखसे मेरी तेरे पे मेहेर हो गई ऐसा कहने की कोई जरुरत नही रहती। ।२।

निज मन तो रिज्यां नही ।। रीत सो तुमे बताऊँ ।।
सुण ज्यो सब नर नार ।। हाक चवडे दे जाऊँ ।।
धन दे लाख क्रोड ।। मुलक कोई मोय चढावे ।।
करे टेल ब्हो भांत ।। मन मांगे सोई लावे ।।
नागो होय नाचे सदा ।। जुग की लज्जा खोय ।।
यां लग तो सुखराम के ।। नही रिजे मन जोय ।।३।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज सभी नर नारीयो को चवडे ज्ञान देके याने बजा बजाकर बता रहे है की,किसीने सतगुरु को लाख करोड(आजके स्थितीमें अरब,खरब)रुपयो का धन दिया तो भी सतगुरु का निजमन रिजेगा नही तथा किसीने सतगुरु को अपना मुलक का राज दिया तो भी सतगुरु का निजमन रिजेगा नही। आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज शिष्य को कहते है की,किसीने जगत की लज्जा खोय के सतगुरु के हलके भारी काम किये तथा सतगुरु के मनको भाये ऐसी वस्तूये लाई तथा भांती भांती प्रकारसे सतगुरु के मन की तथा तन की सेवा की तो भी सतगुरु का निजमन शिष्य से रिजेगा नही क्यों की सतगुरु का निजमन यह सतगुरु के मन से,तनसे तथा पांच इंद्रियो से न्यारा है । यह धन देनेसे सतगुरु का तन रिजेगा,सेवा करनेसे मन और तन रिजेगा परंतु सतगुरु का निजमन कभी नही रिजेगा इसलिये शिष्य ने सतगुरु का निजमन रिजेगा वह कला खोजनी चाहिये और सतगुरु को धन देके या राज देके तथा सतगुरु के शरीर की सेवा करके सतगुरु का निजमन खुश करने का भ्रमित उपाय त्यागना चाहिये ।।।३।।

कुन्डल्या ।।

तन मन धन अर्पण करे ।। कुळ छाडर संग होय ।।
ब्हो लघुताई बिणती ।। कहेर बतावे मोय ।।
कहेर बतावे मोय ।। तहाँ लग रिजूं नाही ।।
अे मेरे बे काम ।। कोण बिध रिजूं मांही ।।
सुखराम दास नही रिजसी ।। यां लग निज मन जोय ।।
तन मन धन अरपन करे ।। कुळ छाडर संग होय ।।४।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज शिष्य को कहते है की,कोई शिष्य सतगुरु को उसका

तन,उसका मन तथा सभी धन अर्पण कर देगा तथा वह शिष्य अपने माता,पिता, भाई, बहन,पत्नी, पुत्र सबको छोड्कर सतगुरुके संग रहेगा और सतगुरुके संग रहते समय सतगुरुसे बहोत लघुताई से बर्ताव करेगा तो भी सतगुरु का निजमन उस शिष्यपर रिजेगा नही। आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज शिष्यको कहते है की,शिष्यका तन,मन,धन,और लघुताई से संग में रहने का बर्ताव सतगुरु के निजमन को रिजाने के काम नही। सतगुरु के निजमन को रिजाने में ये सभी उपाय बेकाम है। ऐसे बेकाम उपाय से सतगुरु का निजमन नही रिजेगा। इसलिये कुल छोड्कर सतगुरु के संग होने से तथा सतगुरु को तन, मन,धन अर्पण करने से सतगुरु का निजमन नही रिजेगा यह समज लाकर सतगुरु रिजेंगे वह उपाय धारण करो ।।।४।।

बांतां से मन रिजसी ।। धन दिया तन जोय ।।
पाचु इंद्रि आतमा ।। अे चावे कहूं तोय ।।
अे चावे कहूं तोय ।। गरज जां सू जे रीजे ।।
बिना चाय की चीज ।। देख अंतर नही भीजे ।।
सुखराम कहे धन माल की ।। मेरे गर्ज न कोय ।।
बातां से मन रिजसी ।। धन दिया तन ज्योय ।।५।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज शिष्य से कहते है की,सतगुरु को निजमन है,सतगुरु को मन है,सतगुरु को तन है,सतगुरु को पाच आत्मा इंद्रिये है । सतगुरु के साथ बाता करोगे तो सतगुरुका मन रिजेगा उससे सतगुरुका निजमन नही रिजेगा । सतगुरुको धन दोगे तो सतगुरु का देह खुश होगा परंतु सतगुरु का निजमन नही रिजेगा । सतगुरु के पांचो आत्मा इंद्रियोको पाच आत्मा जो जो सुख चाहती है वह देवोगे तो वह वह आत्मा रिजेगी परंतु सतगुरुका निजमन बिल्कुल भी नही रिजेगा । मनकी चाहना बाता थी तो वह बातासे रिजा,तनकी चाहना धन की थी तो वह धन से रिजा,पाचो आत्मा की चाहना पाच सुखो की थी वह सुख मिलने पे पांचो आत्मा रिजी परंतु निजमन की चाहना बांता, धन, पांच विषय के सुख यह न होनेके कारण सतगुरुका निजमन इस सुखोसे खुश नही हुवा । इन सुखोसे नही रिजा । इसकारण शिष्य सतगुरु के मेहेर से दूर रह गया । इसपर शिष्य को आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज कहते है की,इन चिजोकी सतगुरु को बिल्कुल भी जरुरत नही है इसलिये सतगुरु का निजमन रिजाने के लिये यह धन,माल,बात आदि के सब उपाय छोड्के जिससे सतगुरु का अंतरमन रिजेगा याने खुश होगा वह उपाय शिष्य ने करना चाहिये ।।।५।।

मे रिंजूं इण बात सूं ।। सुण लिजो नर नार ।।
मेरा होय मोकूं मिलो ।। तो पावो दीदार ।।
तो पावो दीदार ।। निज मन सूंपो लाई ।।

तब प्रगटे तन माय ।। अखंड नख चख बिच आई ।।
सुखराम क्हे ईण रित बिन ।। हंस न उतरे पार ।।
मे रिजूं ईण रीत सूं ।। सुण लीजो नर नार ।।६।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज शिष्य को तथा जगत के सभी नरनारीयो को कहते है की, सतगुरु को तन,मन,धनमाल मुलक का राज,पांचो सुख देनेसे तथा कुल छोड्कर संग रहनेसे, संग रहने पे लघुताई रखनेसे सतगुरु का निजमन नही रिजता। ये सभी बाते सतगुरुके निजमनको रिजानेके लिये बेकाम है। इन चिजोसे सतगुरु का निजमन रिजाने की गरज पूरी नही होगी। क्योंकी सतगुरुको इन बातोकी बिलकुल भी जरुरत नही रहती । आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज हर नर नारीयोको कहते है की,सतगुरुको रिजाना है तो शिष्यको सतगुरु का बन जाना चाहिये। शिष्यने अपना निजमन तन,धनमाल,मुलुक, त्रिगुणी माया,शब्द,स्पर्श, रुप,रस,गंध इन पाच वासनासे निकलकर सतगुरु को सोपना चाहिये मतलब जो सतगुरु याने ने:अंछर याने निजनाम याने सतशब्द आदि से ही हंस में था उसका बन जाना चाहिये। ऐसे अप्रगट नेअंछरका बन जाना तबही हो सकता जब शिष्यका प्राण मायाके बने हुये मनके मोह ममताके सुखोको,धनके मोहममताके सुखोको, पत्नी,पुत्रके मोहममताके सुखोको कुलके मोह–ममताके सुखोको,त्रिगुणी मायाके नश्वर सुखोको,पांच आत्माके पांच वासनाके सुखोको,त्रिगुणी–मायाके वेद,शास्त्र,पुराणके ज्ञानके सुखोको,त्रिगुणी मायाके ध्यानके सुखोको झूठा समजेगा । इन सुखोमें काल का महादु:ख समजेगा । ८४००००० योनीमें आने जानेका दु:ख समजेगा और जो आदिसे अप्रगट रुपमें हंसमें सतशब्द है उससे प्राप्त होनेवाले महासुखोको सच्चा समजेगा तब वह शिष्य तत्काल नेअंछर का बन जायेगा और सतगुरुरुपी सतशब्दको अपना निजमन सौंप देगा । निजमन सौपतेही शिष्यके घटमें अखंड्ति नखसे चखतक उस सतस्वरुपके दर्शन होंगे तथा वह सतस्वरुप शिष्यके घटमें सदाके लिये नखसे चखतक प्रगट हो जायेगा । आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज सभी नर नारीयोको कहते है की,सतगुरुका बनने सिवा मतलब सतगुरुको निजमन सौंपनेके रित सिवा कोई भी अन्य रितसे सतगुरुका निजमन प्रसन्न होता नही और सतगुरुका निजमन प्रसन्न हुये बगेर हंस भवसागरके महादु:खोसे पार उतरेगा नही। इसलिये सतगुरु जिस रितसे रिजते है वही रित धारण करो और अन्य सब मायावी उपाय त्यागन करो और महासुखके पदको प्राप्त करो ।६।।

जिण जिण को तूं होवसी ।। सोई सुण प्रसण होय ।।
आई रीत अनाद से ।। केहे स्मजाऊं तोय ।।
क्हे समजाउं तोय ।। हात तेरे सब होई ।।
जो चावे सो चीज ।। पकड प्रगट क्हूं तोई ।।
सुखराम कहे मां बाप रे ।। तीजा गुरूं क्हूं तोय ।।

जिण जिण को तूं होवसी || सोई सुण परसण होय ||७||

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज ने शिष्य को अनादि से रिजाने की रित कैसे चल रही है तथा वह हंस के ही हाथ में कैसे है इसका आदिसे चलते आये हुये रित का दाखला माता,पिता तथा गुरु का आधार देकर समजाया है। आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज शिष्य को कहते है जगत में माता,पिता तथा गुरु रहते है । हंस जिसका जिसका बनेगा वे उसपे प्रसन्न होते है । जीव को मातासे सुख चाहिये हो तो माता को प्रसन्न करने की रित करनी चाहिये। पिता के सुख चाहिये हो तो पिता प्रसन्न होवे वैसे रित करनी चाहिये और गुरुके सुख चाहिये हो तो गुरु प्रसन्न होंगे वैसे रित करनी चाहिये । माता के सुख चाहिये और पिता को प्रसन्न करनेकी रित की तो माता प्रसन्न नही होगी और वह अपने सुख नही देयेगी तथा गुरुके सुख चाहिये और माता पिता को प्रसन्न करने की रित की तो गुरु कभी भी प्रसन्न नही हो पायेंगे। इसलिये जिससे सुख चाहिये उसीको प्रसन्न करने की रित करनी चाहिये और यह रित सुख देनेवाले माता,पिता या गुरु के हाथ में नही रहती है यह रित शिष्य के हाथ में रहती है मतलब जिसे सुख चाहिये उसीके हाथ में रहती है और अन्य किसीके हाथ में नही रहती । इसलिये आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज जगत के सभी नर नारीयो को समजा रहे है की,इसप्रकार जगत में माता पिता तथा गुरु है,तू जिनका जिनका होगा वे ही तुझपे प्रसन्न होगे दुजे प्रसन्न नही होंगे। अब किसे प्रसन्न करना यह शिष्यके हाथमें है अन्य दुजोके हाथ में नही है। अगर काल के महादु:खो से निकलकर साई के महासुख में जाना है तो महासुख देनेवाले सतगुरु को प्रसन्न करने की ही रित करनी चाहिये और यह रित करना दुजोके हाथमें नही है तेरे ही हाथमें है तेरे ही हाथमें होनेके कारण त्रिगुणी माताको प्रसन्न करके महादु:खमें जानेकी रित या कर्तार परब्रम्ह पिताको प्रसन्न करके कर्तार पद पाके संसारमें फिरसे आके दु:ख पानेकी रित छोड्के ने:अंछ्रके महासुखोकी रित धारण कर और भवसागरके महादु:खोसे पार उतर जा। ||७||

किवत ||

मा से राखे हेत || माय रिजे सुण भाई ||
भोजन देवे लाय || ब्यांव कर सेज बिछाई ||
पिता पत जो होय || बचन लोपे नही कोई ||
तो धन देवे माल || किसब अपणो कहूं तोई ||
सुखराम दास गुरू पत गहे || देवे ग्यान बताय ||
माय बाप दोनू तजे || तब सिर मुंडयो जाय ||८||

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज ने शिष्य से कहाँ की घरमें माता से प्रेम प्रित करने से माता रिजेगी माता रिजने से माता तुझे अच्छा भोजन बना बनाके देयेगी,बढीयाँ सोने के लिये बिछाना कर देगी तथा विवाह कर देयेगी वह तुझे पिता का धन या हुनर नही

सिखायेगी तथा गुरु के पास जो दु:खसे मुक्त होने का ज्ञान है वह नही देयेगी । पिता से

प्रेम,प्रित किया और उनका कोई भी वचन नही लोपा तो तुझपे तेरे पिता प्रसन्न होगें वे रिजनेसे तुझे धन देयेगे तथा धंदे का हुनर सिखाके धंदे से लगा देयेगे परंतु पिता के रिजनेसे तुझे मातासे मिलनेवाले अच्छे भोजन के सुख,अच्छे बिछाने पे सोने का सुख तथा गुरुसे मिलनेवाले मुक्तीपद के सुख तुझे नही मिलेंगे । ऐसे ही गुरु का विश्वास आकर गुरुसे प्रेमप्रित आने पे गुरु तुझे मुक्ती को जाने का ग्यान झेलायेंगे(देगे)। वे तुझे सुख का मुक्तीपद प्रगट कर देगे । वेदी गुरु के पास जाने से माता पिता के घरके,भोजन के,आरामसे बिछाने पे सोने के तथा धनमाल के सुख नही मिलेंगे तथा साथ में संसार के दु:ख भी नही मिलेंगे। माता पिता को त्यागकर और वेदी गुरुका शरणा लेगा तो ही वेदी गुरु तेरा सर मुंड्न करेंगे । अगर शिष्य माता पिता को नही त्यागेगा तो गुरु शिष्य को शरण में नही लेगे। और सर मुंड्न नही करेंगे तथा गुरु ने शिष्य को शरण में न रखनेसे शिष्य माया के सुख के मुक्तीपद से दूर रहेगा ।।।८।।

कुंडल्या ।।

माता रिजे बचन सूं ।। पिता काम से जोय ।।
गुरू रिजे भै भित मन ।। ग्यान गहे कहूँ तोय ।।
ग्यान गहे कहुं तोय ।। येहे मेरी बिध भाई ।।
तेरी तेरे हात ।। समझ कर पकडे आई ।।
सुखराम क्हे यूं कुळ तजे ।। तब बेरागी होय ।।
माता रिजे बचन सूं ।। पिता काम से जोय ।।९।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज नर नारीयोसे तथा शिष्य को कहते है की,माता यह मीठे बचन बोलने से रिजती है तो पिता उसका कामधंदा संभालके करने से खुश होता है । इस प्रकार शिष्य गुरु से मन मे भैभीत रहने पे गुरु रिजता है । शिष्य भैभीत रहेगा तोही गुरु का ज्ञान ध्यान करेगा और गुरु ज्ञान धारण करेगा तो ही गुरु को आनंद आयेगा ऐसी गुरु की रित रहती है । इसप्रकार की तीन जगत में रित है। इन रितो पे से यह समजता की हंस माता से प्रित करके मिठे वचन बोलेगा तो माता हंस पे रिझेगी तथा जीव(हंस)पिता से प्रित करके उसका काम धंदा संभालेगा

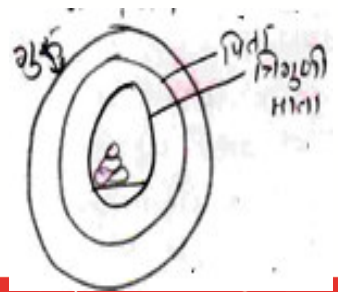

तो पिता खुश होगे और शिष्य ही गुरु से भयभीत रहकर ज्ञान प्राप्त कर लेगा तो गुरु खुश होंगे मतलब माता,पिता तथा गुरु को रिजाने की रित यह सिर्फ हंस के हाथ में है अन्य किसीके हाथ में नही । माता पिता से संसार के सुख मिलेगे वे सुख चाहिये तो

माता पिता को रिजावो और वेदी गुरु से ज्ञान का सुख चाहिये हो तो वेदी गुरु को रिजावो । माता पिता से खाने के,हुन्नर के सुख है साथ में संसार के दु:ख है और वेदी गुरु के साथ खाने पिने के दु:ख है साथमें ग्यान सुख है उसमे संसारका दु:ख नही है। इसीप्रकार हंस त्रिगुणीमाया माता को रिजायेगा याने त्रिगुणीमाया की विधियाँ–ओअम की भक्ती,तीर्थ,व्रत,योग,नवविदया भक्ती, ब्रम्हा की भक्ती,शंकर की भक्ती, शक्ती की भक्ती, जप,तप यह करेगा तो त्रिगुणीमाता उसपे रिजेगी । उसके सुख उसे मिलेंगे। ऐसेही कोई हंस परब्रम्ह पिता को रिजायेगा याने परब्रम्ह की विधीयाँ–सभी मे ब्रम्ह देखना, सोहम् जाप अजप्पा करेगा तो पिता उसपे रिजेगा। ऐसेही हंस बैरागी गुरु याने सतस्वरुपको रिजायेगा,गुरु से भयभीत रहेगा उसपे सतस्वरुप गुरुकी मेहेर होगी । त्रिगुणी माताके साथ थोडे सुख साथमें ८४००००० योनी का,जन्म–मरने का,अगती का,नर्कका दु:ख है । पारब्रम्ह पिता का हुन्नर इसे मिलेगा परंतु फिरसे निचे आनेपर दु:ख छुटेगा नही । जैसे ज्ञान का सुख चाहिये है तथा कभी संसार का दु:ख नही चाहिये है तो बैरागी

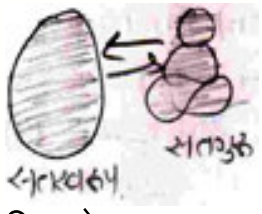

बनना पडेगा और बैरागी बनना है तो वेदी गुरु को निजमन देना पडेगा,वेदी गुरु से प्रित करनी पडेगी वेदी गुरु से भयभीत रहना पडेगा और कुल याने माता तथा पिता को त्यागना पडेगा तबही वेदीगुरुसे बैराग्य की रित शिष्य मे बनेगी । इसीप्रकार सतस्वरुप विज्ञान बैरागी जिसमे महासुख है ऐसा बनना है तो सतस्वरुपी सतगुरु से भयभीत रहना पडेगा याने सतगुरु की आज्ञा मे रहना पडेगा और उन्हे निजमन देना पडेगा और त्रिगुणीमाया के सुखो की विधियाँ तथा कर्तार पारब्रम्ह के सुखो की विधियाँ त्यागनी पडेगी । त्रिगुणीमाया की सुखो की विधियाँ तथा कर्तारब्रम्ह की सुख की विधियाँ त्यागनेसे ही गर्भ में आने का चक्कर खतम् हो जायेगा । इसप्रकार अब तुमही समजकर निर्णय करो और जो सुख चाहिये उन्हे पकडो तथा उन सुख देनेवालेको रिजावो । क्या पाना है वह तुम्हारे हाथ में है वैसा ज्ञान से समजकर निर्णय करो ।।।९।।

जो जिनको नर होवसी ।। तामे मिलसी जाय ।।
ओर जात मे किम मिले ।। बांता करके आय ।।
बांता करके आय ।। राछ कोई पिछले आवो ।।
यूं गुरू पासे ग्यान ।। सुण अपणे घर जावो ।।
सतगुरू किरपा तब बणे ।। निज मन सुंपे लाय ।।
जो जिनको नर होवसी ।। तां मे मिलसी जाय ।।१०।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज नर नारीयो को तथा शिष्य को कहते है की,तुम जिनका बनोगे उसीसे तुम्हे सुख मिलेगे। माताको मिलेंगे तो मातासे सुख मिलनेवाले है वे ही मिलेंगे। माता को मिलने पे पिताके या गुरुके सुख कैसे मिलेंगे?पिताको पायेंगे तो

पितासे मिलनेवाले सुख मिलेंगे। माता और वेदी गुरुके सुख कैसे मिलेंगे?तथा वेदी गुरुसे मिलेगे तो गुरुके पासके सुख मिलेंगे । माता पिता के सुख कैसे मिलेंगे?माताके सुख चाहिये हो तो माताके जात का याने स्वभाव का बनना पडेगा । पिताके सुख चाहिये हो तो

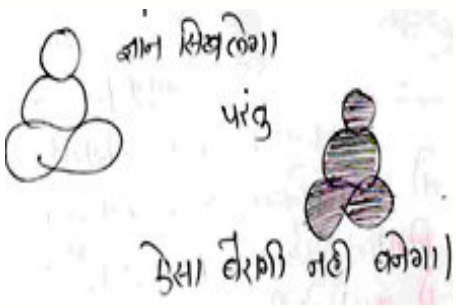

पिताके जात का याने स्वभावका बनना पडेगा और वेदी गुरुके सुख चाहिये हो तो गुरुके जात का मतलब बैरागी बनाना पडेगा । माता के जात के तो बने नही और मातासे सुख चाहिये है तो माता से सुख नही मिलेंगे मातासे बाता करते आयेगी या कोई मातासे वस्तु सामान लेते आयेगी वैसे ही पिताके जातके बने नही और पिताका पदका सुख चाहिये हो तो पितासे कभी भी नही मिलेगा। जैसे माताके साथ बात करते आयी या एखाद वस्तु मांगके लाते आयी वैसा ही पिता के साथ करते आयेगा पिता का पद नही मिलेगा। इसीप्रकार वेदी गुरु के पास गये और वेदी गुरु को मन सौंपा नही तो वेदी गुरुका गुरुपद शिष्य को नही मिलेगा । जैसे माता पिता के न बननेके कारण माता पिता से मांगनेवालेको एखाद वस्तू मिलीया बाता करते आयी उनका पदका सुख नही मिला ऐसे ही वेदी गुरुसे वेदी गुरुका गुरुपद नही मिलेगा। वेदी गुरु से ज्ञान पाकर अपने कुलमें वापिस लौटनेका ही योग बनेगा। बैरागी बननेका योग नही बनेगा। इसीप्रकार त्रिगुणीमायाका ज्ञान सुना और त्रिगुणीमायाके बने नही तो त्रिगुणी मायाके ब्रम्हा,विष्णू,महादेव,शक्ती,आदि सुखके पद नही मिलेंगे। होनकाल पारब्रम्हका ज्ञान सुना और उसका बना नही तो होनकालका बिना दु:खवाला कर्तार पद नही मिलेगा। होनकाल पारब्रम्हका ज्ञान सिखनेको मिलेगा। सतस्वरुप विज्ञान बैरागी बननेका योग तो तभी बनेगा जब शिष्य सतगुरुको अपना निजमन सौपकर सतस्वरुपी सतगुरुका शिष्य बन जायेगा ऐसा होने पे ही सतस्वरुपी सतगुरुकी शिष्य पे कृपा होगी और शिष्य सतगुरुके सतस्वरुप विज्ञान वैराग्यपदमें मिल जायेगा । जबतक शिष्य सतगुरु को निजमन नही सौपेगा तबतक शिष्यपें की मेहेर नही होगी और शिष्य सतगुरु पदमें नही मिलेगा। उसने सतगुरु पदका ज्ञान सीख लेगा लेकिन वह सतगुरुको मिलनेके पहले जैसा था वैसाही कुलका याने माता,पिताका बने रह जायेगा। संसारी बने रह जायेगा। विज्ञान ज्ञान बैरागी नही बनेगा। ज्ञान बैराग्यके सुख नही मिलेंगे। संसारके सुख दु:ख भोगते रहेगा ।।१०।।

जळ हुवा जळ मे मिले ।। झाळ हूंवां झळ मांय ।।
ध्रणी होय धर मे मिले ।। पवन हुवां पख जाय ।।
पवन हुवां पख जाय ।। जात मे जाती मावे ।।
या बिध आद अनाद ।। ब्रम्ह माया लग कवावे ।।
सुखराम क्हे यूं समज कर ।। निज मन सुंपो आय ।।

जळ हुवां जळ मे मिले ।। झाळ हुवां झळ माय ।।११।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज जगत से कहते है की,आद अनाद से जातकी में ही मिलने की रित है । एक जातकी दुजे जातमें मिलने की रित नही है । जैसे कही पे भी

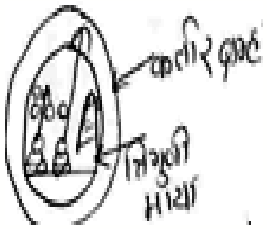

जल बरसा तो वह जल जलमें ही मिलेगा । वह जल अग्नी,वायु या धरती में नही मिलेगा । कही पे भी आग लगी तो वह आग में ही मिलेगी । वह आग धरती,जल या वायुमें नही मिलती । इसीप्रकार धरती धरती में ही मिलेगी । वह वायु,अग्नी जल में नही मिलेगी तथा वायु वायु में ही मिलेगा । वह धरती,आग या जल में नही मिलेगा । इसीप्रकार त्रिगुणी माया का भक्त त्रिगुणीमाया में ही मिलेगा और कर्तारब्रम्ह का भक्त कर्तारपदमें ही मिलेगा

। त्रिगुणीमाया का तथा कर्तार ब्रम्हका संत गुरुपदके महासुखमें नही मिलेगा । त्रिगुणीमायामें यमका दु:ख है और कर्तारपदमें गर्भमें आनेका दु:ख है । ये दोनो दु:ख नही चाहिए हो तो ये दोनो पदमें जानेकी रित त्यागनी चाहिये उसमेसे मन निकालना चाहिये और सतगुरुको निजमन सौंपना चाहीए । सतगुरुको निजमन सौंपनेसे शिष्यके घटमें गुरुपद याने सतशब्द याने निजनाव याने नेअंछर याने अखंडीत ध्वनी जो पर अक्षरोमे आती नही,मुखसे बोले जाती नही,कागज पे लिखी जाती नही वह ध्वनी तत्काल जागृत होगी और शिष्यका हंस मायावी मनसे,मायावी ५ आत्मासे त्रिगुणीमाया से,त्रिगुणीमाया के पती कालसे मुक्त होगा और सतस्वरुप में मदोन्मस्त हो जायेगा ।११।

गुरू का होय गुरू मे मिले ।। तां का अे अंग होय ।।
सत्तस्वरूप के जोग बिन ।। और ईस्क नही कोय ।।
और ईस्क नही कोय ।। रात दिन आ मन माही ।।
उलट चडूं आकास ।। पेम उर मावे नाही ।।
सुखराम हेत आ रिझसो ।। कळ बिन पडे न मोय ।।
गुरू का होय गुरू मे मिले ।। तां का अे अंग होय ।।१२।।

इसीप्रकार जिसका स्वभाव गुरु का होकर गुरु मे मिलने का रहता उसे सतस्वरुप के राजयोग बिना और कोई प्रेम नही रहता मतलब चाहना नही रहती उसके मन मे रातदिन बंकनाल दसवेद्वार मते चढा जाय यही एकमात्र चाहना रहती । ऐसे शिष्य को गुरु के प्रती इतना प्रेम रहता कि वह प्रेम उसके हृदय मे माता नही । इसप्रकार सतस्वरुप के जोग बिन एकपल भी चेन नही आता ऐसा हेत होने पे(कल बिन पडे न मोय)मेरा निजमन खुश होता ऐसे आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज कहते है ।।।१२।।

सतगुरू के अंग सिष चले ।। ओर न माने ग्यान ।।
सर्ब ग्यान इनका किया ।। क्या म्हे धर सूं ध्यान ।।

क्या मे धरसूं ध्यान ।। बुध्ध अेसी जब आवे ।।
सो हंस गुरू को होय ।। सोझ ओ पत संभावे ।।
सुखराम क्हे सत्तस्वरूप की ।। तब कृपा व्हे आन ।।
सुतगुरू के अंग सिष चले ।। और न माने ग्यान ।।१३।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज जगत के लोगो को कह रहे है की,सतगुरुके अंगके सिवा याने सतशब्द के ज्ञान के सिवा त्रिगुणी माया का तथा पारब्रम्ह का ज्ञान नही मानना । ऐसा ज्ञान से समजना की,जगत में जितने ज्ञान है,ध्यान है वे सभी सतशब्द गुरु के आधार से ही बने है मतलब सतशब्द त्रिगुणीमायाको या पारब्रम्हको अपनी सत्ता नही देता था तो त्रिगुणीमाया तथा पारब्रम्ह का ज्ञान अस्तित्व में ही नही आता था । ऐसी सत्ता सतगुरु में है अब इस सत्तासे भारी कौन है की जिसका मैने ज्ञान तथा ध्यान करना चाहिये ऐसी समज बुध्दी घटमे जागृत करना । ऐसी घटमे बुध्दी आते ही हंस सत्ताधारी सतगुरु का बन जाता और गुरुसे प्रेममें अकबक हो जाता । जब गुरुसे अकबक प्रेम हो जाता तब सतस्वरुपकी मेहेर शिष्य पे हो जाती और शिष्यके घटमें नखसे चखतक अखंड्ति ध्वनी प्रगट हो जाती ।।।१३।।

केस बराबर आंतरो ।। जे हंस राखे कोय ।।
तो आ कृपा ने बणे ।। अेसी कुद्रत होय ।।
अेसी कुदरत होय ।। निज मन माने नाही ।।
कपट लियां आधीन ।। ताय घर जावे नाही ।।
सुखराम क्हे पच पच मऱ्यो ।। ग्रज सरे नी कोय ।।
केस बराबर आंत्रो ।। जे हंस राखे कोय ।।१४।।

जो हंस होनकालसे एक केसभर भी प्रीत रखेगा मतलब कुद्रतसे एक केसभर भी अंतर रखेगा उस हंसपर कुद्रत याने सतगुरुकी कृपा नही बनेगी । कुद्रतकी आदिसे रीत ही ऐसी है कि शिष्य कुद्रतके साथ कपट रखकर कितना भी आधिन होके रहा तो भी कुद्रतका निजमन शिष्य पे खुश नही होता और ऐसे शिष्यके घटमे कुद्रत नही जाता याने शिष्य के घटमे कुद्रत प्रगट नही होता । आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज यहा तक कहते है कि शिष्य केसभर भी कपट रखते हुये पचपच मर गया तो भी सतगुरु से कृपा होने की गरज पुरी नही होती ।।१४।।

अंतर छाड गुरू सूं मिले ।। भावे जिण बिध आय ।।
तो कारण कुछ ना रहे ।। कळा प्रगटे जाय ।।
कळा प्रगटे जाय ।। साच सतगुरू मन भावे ।।
गुरू बिच अंतर होय ।। सोय सिष झुट कवावे ।।
सुखराम क्हे सतगुरू मिल्यां ।। नांव प्रगटे माय ।।

अंतर छाड गुरू सूं मिले || भावे जिण बिध आय ||१५||

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज ने जगत के लोगो को बताया है की,हंस के उर मे सतगुरु के प्रती कैसी भी नीच समज रही,कपट समज रही जिस समजसे सतगुरु और शिष्य मे अंतर बन रहा वह अंतर शिष्यने जो भी बिधीसे निकाल ली तो शिष्य में कुद्रतकला प्रगट हो जायेगी फिर यह कुद्रतकला शिष्य के घट में प्रगट नही होगी ऐसा कारण ही नही बन सकता क्योंकी गुरु और शिष्य का अंतर ही शिष्य ने खतम कर दिया रहता । जो शिष्य गुरु में याने सतशब्द में अंतर रखते है याने सतशब्द से त्रिगुणी माया में मन लगाते है तथा माया को बडा समजते है वे शिष्य गुरु के शरण आये रहे तो भी वे शिष्य निजमन से झूठे होने के कारण उनमे यह कुद्रतकला कभी नही प्रगट होती । शिष्य निजमन से झूठे नही होते तो उनको सतगुरु मिलने पे नाम प्रगटता ही प्रगटता परंतु जब नाम प्रगट नही होता मतलब वह गुरु में दोष नही है वह शिष्य में गुरु से झूठ रहते का दोष है अगर शिष्य यह झूठ का दोष कैसे भी अपने उरसे निकाल लेगा तो शिष्य के घट में सत्तकला प्रगट होने में कसर नही रहेगी ।।।१५।।

भोळे को दोसण नही || अंग न जोवे कोय ||
वां पर गुरू को हेत रे || तुर्त घिरे कहूं तोय ||
तुरत घिरे कहूं तोय || अरथ तां को वो होई ||
ज्यूं ठग के आणंद जोर || मुढ देख्या से सोई ||
सुखराम मन यूं खुसी हुवे || ओ बस होसी जोय ||
भोळे को दोसण नही || अंग न जोवे कोय ||१६||

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज जगत को कहते है,जो हंस भोला है,होनकाल के ज्ञान मे भी समजता नही तथा सतस्वरुप विज्ञान को भी समजता नही उसके लिये होनकाल भी ठिक है और दु:ख भी ठिक है ऐसे भोले पे सतगुरु की प्रिती बहुत रहती । जैसे मुढ को देखकर ठग को आनंद आता और ठग मुढ को तुर्त घेर लेता ऐसेही सतगुरु को भोले शिष्य को देखकर आनंद आता और सतगुरु उसे तूर्त घेर लेते ठग को उसका धन लुटने का आनंद आता तो सतगुरु को उसकी काल के लुट से बचाने में आनंद आता । दोनो के हेतू में भारी फरक है परंतु आनंद आने में कोई फरक नही है । ठग का हेतू धोका है और सतगुरु का हेतू दया है । इसलिये आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज भोले का अंग स्वभाव न देखते यह काल के चपेट से निकल जायेगा । इसका आनंद आने के कारण उसपे प्रसन्न हो जाते और उस भोले वे घट मे सदा के लिये सतसाई प्रगट करा देते । ।।१६।।

ग्यानी पर निज मन की || इण बिध मेहर न होय ||
अंतर अर्थ पिछाण ले || अे बस पडे न कोय ||

अे बस पडे न कोय ।। भ्रम भारी इण पासे ।।
निज मन के ऊर रेस ।। नित अंतर आ आसे ।।
सुखराम क्हे मुज दोस नई ।। सुण लिज्यो सब लोय ।।
ग्यानी पर निज मन की ।। इण बिध म्हेर न होय ।।१७।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज जगतको कहते है की जैसे भोले पे सतगुरु की मेहेर होती उस रितीसे होनकाली ज्ञानी पे सतगुरुके निजमनकी मेहेर कभी नही होती । होनकाली ज्ञानीयोमें मायामें ही भारी भारी सुख है ऐसे भारी भारी भ्रम भरे रहते । ऐसे ज्ञानी स्वर्गादिक के पाच आत्माके वासनाके सुखको सतस्वरुपके सुखसे भारी समजते । ब्रम्हा,विष्णू ,महादेवके त्रिगुणी मायाके सुखो को भारी,पुर्ण तथा सदा तृप्ती देनेवाले समजते । ऐसे शिष्य सतगुरु के पास आते,शरण लेते,शरण लेकर अंतर में सतस्वरुप के सुख को समजते परंतु होनकालके सुख सतस्वरुपके सुखसे उंचे दिखनेके भ्रमके कारण सतगुरु साथ रहने पे भी ऐसे शिष्यका निजमन सतगुरुके वश नही होते उसमे तथा सतगुरुमें नित्य अंतर बना रहता उस कारण सतगुरुको वह निजनाम नही दे सकता । अंतत: वह कालका चारा बनता । यह शिष्य सतगुरु से जुड्ता परंतु ब्रम्हा,विष्णू,महादेवको सतगुरुसे जादा समजता । इसलिये आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज जगतको कहते है की ऐसा शिष्य सतगुरुके पास सदा रहने पे भी उसके घटमे निजनाव प्रगट नही होता । यह सतस्वरुप प्रगट न होने का दोष सतगुरुमें नही है यह दोष शिष्यमें रहता । शिष्यको ब्रम्हा,विष्णू,महादेव,शक्ती यह त्रिगुणी माया सतस्वरुपने अंछरसे भारी दिखनेके भ्रम के कारण शिष्य में दोष आया रहता ।।।१७।।

भ्रम आगला छाड दे ।। बळ तज निर्बळ होय ।।
गुरू की म्हेमा जक्त मे ।। करे भिन्न भिन्न जोय ।।
करे भिन्न भिन्न जोय ।। तबे निज मन सो माने ।।
तब भागे अंतराय ।। हंस अपनो कर जाणे ।।
सुखराम ग्यान्याँ उपरे ।। तब प्रसण व्हे जोय ।।
भ्रम आगला छाड दे ।। बळ तज निर्बळ होय ।।१८।।

ऐसे ज्ञानी अगले भ्रम ज्यु त्यु करके त्याग देता है और होनकाल के ज्ञान परचे–चमत्कारो का रिध्दी सिध्दी का बल त्यागकर निर्बल बन जाता है और सतगुरु के पराक्रम को भिन्न भिन्न तरहसे ज्ञानसे समज लाकर होनकाली बलसे भारी बलवान समजता है और फिर सतगुरु के शरणमे रहता है तो ऐसे ज्ञानीके प्रती सतगुरुके निजमन में जो अंतर पडा था वह अंतर मिट जाता है । यह हंस अपना है मतलब सतस्वरुप का है यह समजकर ऐसे हंस पे सतगुरुका निजमन अपने आप प्रसन्न हो जाता है तथा शिष्य में नामकला जागृत हो जाती है और वह ज्ञानी जीव सदा के लिये कालसे मुक्त हो जाता है ।।।१८।।

सत्तगुरू को अंग एक ही ।। ओर अंग नही कोय ।।
निर्बळ हुवां बिन हंस पर ।। म्हेर न हुवे जोय ।।
म्हेर न हुवे जोय ।। दया सतगुरू के नाही ।।
ना किसही पर रोस ।। अंग कारण वो क्राही ।।
सुखराम क्हे रंक राव बिच ।। बस बिन मेहर न होय ।।
सत्तगुरू को अंग अेक ही ।। और अंग नही कोय ।।१९।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज जगतको कहते है की,सतगुरुका एकमात्र स्वभाव रहता । वे शिष्य पे शिष्य जबतक होनकाल तथा त्रिगुणी माया से निर्बल होकर सतगुरु के बस मे आता नही तबतक सतगुरु की शिष्य पे मेहेर नही होती । सतगुरु की जगत के किसी हंस पे दया नही रहती तो किसीपे रोष भी नही रहता । उन्हे सारा जगत अपनाही लगता चाहे वह राजा रहे या रंक रहे । उन्हें राजा या रंक दिखता ही नही ऐसी भारी दिव्य दृष्टी सतगुरुमे प्रगट हुई रहती । उन्हें सिर्फ राजाका या रंक का हंस दिखता । राजा के पासकी माया या रंक के पासकी दरीद्री कभी नही दिखती उन्हें राजा का तथा रंक का प्राण एकसरीखा है ऐसा दिखता इसकारण राजा है तो सतगुरु की दया होगी और रंक होगा तो सतगुरु को रोष रहेगा ऐसा सतगुरु के पास रहता नही । जो हंस होनकालके पाये हुये बलको खतम कर देता तथा सतगुरु के ने:अंक्षर के वश हो जाता उसपे सतगुरु की मेहेर होती और वह हंस चाहे राजा हो या रंक हो वह अमरलोक का मालिक बन जाता और वहाँ अनंत सुख भोगता ।।।१९।।

भोळे पर ततकाळ सो ।। बणे रीत यूं जोय ।।
निज मन गुरू को खुष हुवे ।। ओ बस पडसी मोय ।।
ओ बस पडसी मोय ।। पंथ सत्तगुरू के आसी ।।
ग्यान कहे सो रीत ।। हंस ओ तुरत संभासी ।।
ग्यानी कुं सुखराम केहे ।। निज मन गहे न कोय ।।
भोळे को ततकाळ सो ।। रित बणे यूं जोय ।।२०।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज जगत के लोगो को बता रहे है,की सतगुरु भोले हंस को देखकर यह समजते की,यह हंस सतगुरु के बस में आयेगा तथा सतगुरु का सतस्वरुप में जाने का जो मार्ग है उस मार्ग में आ जायेगा तथा सतगुरु जो सतस्वरुप के ज्ञान की रित बतायेगे वह रित यह भोला हंस तुरंत धारण कर लेगा । इसकारण भोले पे सतगुरु की मेहेर तत्काल होती। मेहेर होते ही भोले जीव में साहेब प्रगट हो जाता परंतु ज्ञानी जीव पे ऐसा नही होता। ज्ञानी जीव सतगुरु के बसमे नही आयेगा तथा सतस्वरुप का मार्ग धारण नही करेगा तथा सतस्वरुप की रित निजमन से धारण नही करेगा ऐसा शिष्य का बर्ताव सतगुरु के समज में आने के कारण ज्ञानी शिष्य पे सतगुरु की मेहेर नही होती । सतगुरु

की मेहेर न होने कारण ज्ञान शिष्य में सतसाहेब प्रगट नही होता ।।।२०।।

ग्यानी सो आधीन होय ।। लेले आवे संग ।।
तो अंतर की रेसवा ।। ज्यूं त्यूं कर दे भंग ।।
ज्यूं त्यूं कर दे भंग ।। म्हेर निज मन की होवे ।।
तो बणे संत सो खूब ।। नेक पाछो नही जोवे ।।
कळ बळ कर सुखराम केहे ।। इण मन का भ्रम भंग ।।
ग्यानी सो आधिन होय ।। ले ले आये संग ।।२१।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज जगत के लोगो कहते है,ऐसा ज्ञानी होनकाल के ज्ञान के बल को नाश करके सतगुरु के ज्ञान का संग करके सतगुरु के आधीन रहता । तथा खुदके उरमे जो सतगुरु के प्रती अंतर था वह कैसे भी भंग कर देता तो ऐसे ज्ञानी पे भी सतगुरु के निजमन की मेहेर हो जाती ऐसे ज्ञानी की विशेषत: यह रहती की यह ज्ञानी बडा सतस्वरुपी संत बनता और कभी भी कोई भी प्रसंग में फिर से होनकाल के ज्ञान में नही जाता। इसलिये आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज जगत के सभी ज्ञानियो से कहते है की,अरे ज्ञानियो सतगुरु का संग पकड्कर सतगुरु के आधिन रहके मन मे होनकाल यह सदा तथा तृप्त सुख देनेवाला है यह समजका जो भ्रम है उसे अलग अलग कला तथा सतस्वरुप का ज्ञान वापरके(इस्तेमाल करके)मिटा लो और सतस्वरुप का देश पावो । ।।२१।।

ने छे कबुहक रिजसी ।। केईक अर्थ पर जोय ।।
ग्यानी यूं बिचार कर ।। संग मा छोडो कोय ।।
संग मा छोडो कोय ।। घेर मन सत्तगुरू पे लावे ।।
ऊ परळे बोहार ।। रीत रंग करता जावो ।।
सुखराम बाण नित फेकीयां ।। कोईक लागेगो जाय ।।
ने छे कबुहक रिजसी ।। केईक अरथ पर आय ।।२२।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज ज्ञानीयोसे कहते है की,सतगुरु का शरणा धारण किया तो भी सतगुरु मेहेर नही करते तो भला इसीमे ही है की,सतगुरु का संग त्याग देवे ऐसा मन में विचार आता है। ऐसा बिचार आने पे भी आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज ज्ञानीयोसे कहते सतगुरु का संग त्यागो मत और किस कमीसे सतगुरु मुझेपे रिजते नही, इसका बिचार करते रहो। जो बिचार सतगुरुसे दूर करते उसमेके ओर लगावा। साथमें उपरके व्यवहार,रंगरीत सतगुरु के अनुसार करते रहो ऐसा करते रहने पे कोई ना कोई बाण(तीर)बराबर लगेगा जिससे सतगुरु प्रसन्न हो जायेंगे और साहेब घटमे प्रगट हो जायेगा ।।।२२।।

कवित्त ।।

धन केति अेक बात ।। वहाँ कुळ जक्त बिचारो ।।
तां के हेत मोहो काज ।। जाण बिच अंतर डारो ।।
अेसी अक्कल बिचार ।। आप बस सो तो किजे ।।
तन मन धन लग साच ।। सुंप सत्तगुरू कूं दिजे ।।
पिछे सुण सुखराम के ।। सिष कू दोस न कोय ।।
गुरू पद को बिडद लाजसी ।। जो किरपा नही होय ।।२३।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज जगतके नर नारीयोसे कह रहे की,अरे जगतके लोगो तुम धन मे मोह लगाके बैठे हो। जो सतस्वरुपके सामने बहुत छोटी बात है तथा कुल याने माता,पिता,भाई,बहन,पत्नी,पुत्र और जगतमें के रिस्तेदारोसे मोह लगाके बैठे हो और उस मोहके कारण सतगुरु को निजमन सौंपनेमें अंतर डाल रहे। इसका यह परीणाम होगा की,शरीर छुटने पे धन भी जायेगा कुल परीवार तथा रिश्तेदार भी जगहके जगह पे रह जायेंगे और अकेले कालके हाथसे कुटे जावोगे। कालके हाथमें अकेले ही कुटे जावोगे इसकी अक्कल रखो तथा जो आपके बस में है,जैसे तन,मन,और धन में मोह निकालने की विधी करो और सतगुरु को निजमन सुपरत करो। ऐसा करनेवाले शिष्य के सभी दोष खतम् हो जाते। फिर ऐसे दोष रहीत शिष्य पे अपने आपसे ही सतगुरुके निजमन की मेहेर हो जायेगी। ऐसे दोषरहीत शिष्य पे सतगुरुने मेहेर नही की तो सतगुरु पदका बिड्द लजाये जायेगा और ऐसा बिड्द लजानेवाला काम सतस्वरुप कभी भी नही होने देता । ।।२३।।

धन हात को मेल ।। ब्होर ब्होतेरे आवे ।।
कुळ केताईक दिन ।। छोड ने छे जन जावे ।।
सुत्त बित्त कामण झूट ।। ताय सें क्यां हेत कीजे ।।
दस दिन पाछेई जाय ।। ताय सै पेली दीजे ।।
ज्यूं रिजे सुखराम के ।। सत्तगुरू साहिब आण ।।
पडियो जस भां ऊपरे ।। लिजो प्रख पिछाण ।।२४।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराजको शिष्य कहते है की,धन यह हाथका मैल है मतलब चले भी गया तो फिरसे कमाये जाता। कुल के लोग तथा पुत्र,धन,स्त्री इनमे मोह ममता रखना यह भी झूठ है कारण दस दिनसे याने कुछ दिनोसे जब शरीर छुटेगा तब इनमेसे याने स्त्री,पुत्र कुल तथा धनमे से कोई भी साथ आनेवाला नही है। जब मृत्यु पश्चात कोई साथ नही आ सकता तो इनमे याने स्त्री,पुत्र,कुल तथा धनमे मोह रखके सतगुरु में अंतर रखना यह दगा बनेगा इसलिये स्त्री,पुत्र,कुल तथा धन इसमेसे मन निकालकर साहेबरुपी सतगुरु मे डाला तो सतगुरु साहेब रिजेंगे और बक्षिस में सतसाहेब घटमे प्रगट करा देंगे । सतसाहेब तन मे प्रगट करा लेना यह जमीनपे पडा हुवा भारी यश है मतलब इस भारी

जस के लिये कोईभी किमत नही मोजनी (गिननी)पडती इसकी पहचान करो ।।।२४।।

कुंडल्यो ।।

पडीये जस मे गुण घणो ।। जे कर सक्के कोय ।।
जुग जुग जग सोभा रहे ।। गुरू रिजे क्हुं तोय ।।
गुरू रिजे कहूँ तोय ।। रिझ मे निज पद पावे ।।
उलट चढे अस्मान ।। फोड ब्रहेमंड कूं जावे ।।
सुखराम क्हे सूरा सुणो ।। सत्त बचन ये होय ।।
पडिये जस मे गुण घणो ।। जे कर जाणे कोय ।।२५।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज संत को कहते है की,यह जमीन पे पडे हुये जस मे

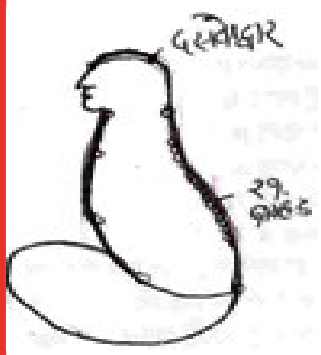

भारी गुण है । यह जस ले सके तो ले लो । इस जससे जुग जुग में जगत शोभा करेंगे और साथमें सतगुरु का निजमन भी रिजेगा । सतगुरु का निजमन रिजा तो सतगुरु रिज के बदले में शिष्य को बंकनाल के रास्ते से उलटाकर २१ ब्रम्हंड फोड्वाकर ब्रम्हंड याने दसवेद्वार पहुँचा देयेंगे । आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज शिष्य को कहते है की,अरे शुरवीर ये जमीन पर पडे हुये जस में दसवेद्वार पहुँचने का भारी गुण है यह सत्य मान और कर सके तो यह जस लेले । और सदा के लिये महासुख में चले जा ।।।२५।।

कवत ।।

धन को कारण नाय ।। प्रीत को कारण होई ।।
बिना प्रित आ रीत ।। कुण कर सक्के कोई ।।
इण आडा गढ कोट ।। सक्त समसेर समावे ।।
माया बस सब हंस ।। कोण से बेंची जावे ।।
सुखराम दास सत्स्वरूप को ।। अंस पडे कहुं आय ।।
सो माया के बस नही ।। करले ज्यूं मन चाय ।।२६।।

गुरु के रिजाने के लिये धन यह कारण नही बनता । शिष्य के पास कम धन या जादा धन इसपर गुरु की मेहर निर्भर नही रहती । गुरु रिजाने के लिये शिष्य के प्रीती का कारण रहता। धन नही है परंतु गुरु से प्रिती है तो गुरु रिज जाते और धन भरपूर है परंतु गुरु से प्रिती नही है तो शिष्य पच पच मर गया तो भी गुरु नही रिजते । गुरु से प्रित लाने की रीत शिष्यके हाथ में है । शिष्य के अलावा ओर किसीके हाथ मे नही है इसकारण गुरु से प्रित लाने की रीत शिष्य के अलावा प्रित लाने के रीत स्वय शिष्य के अलावा ओर कोई कर नही सकता यहातक की सतगुरु भी यह रीत प्रगट नही करा सकते । यह गुरुसे प्रित लाने के आडे बडे बडे भ्रम के किल्ले है। शक्ति याने माया भ्रमरुपी तलवार लेकर खडी है। इन शक्ति ने फैलाने हुये भ्रमो के कारण सभी हंस माया के बस मे हो गये

है। इन भ्रमो के कारण इस माया से कोई भी हंस छूट नही सकता या छूट नही रहा । आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज कहते है जब सतस्वरुप का अंश हंस मे पड्ता तब वह हंस माया के बस मे नही रहता फिर माया उसे अटकाने के लिये मन चाहे कोई भी कोशिश करे तो भी हंस उससे अटकता नही ।।।२६।।

जो धन दे हर हेत ।। रिस माने नही कोई ।।
जे दे माया काज ।। ब्होत जुग राजी होई ।।
की वो ओ इन कोई काम ।। ब्रम्ह लग सोभा सारी ।।
जिऊँ जुग मे मा बाप ।। बिणज पर्णो नर नारी ।।
सुखराम दास सत स्वरूप हेत ।। माया तजी न जाय ।।
जिऊँ कुळ के हेत जुग सब करे ।। जन कूं नही दे लाय ।।२७।।

पारब्रम्हके कार्यके लिये धन देता है उस हंस की जगतमे कोई भी रिस नही मानता तथा ब्रम्हा,विष्णू,महादेव,शक्ति आदि मायाके कार्यमे धन देता है । ऐसे हंस पे जगत बहोत खुश होता । धन देने की रित पारब्रम्ह पिता और इच्छा माता याने माया कुल के लिये है । वैरागी सतस्वरुप के लिये नही । ऐसे धन देनेवाले की पारब्रम्ह तक शोभा होती है । यह शोभा जैसे जगत में माँ–बाप के कार्यो मे,धंदा,व्यवहारमे तथा विवाह प्रित्यर्थ खर्च करने पे होती उस प्रकारकी ब्रम्हा,विष्णू,महादेव,शक्ति त्रिगुणी माया तथा पारब्रम्ह मे होती । आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज कहते है कि,सतस्वरुप के कार्य मे माया दी नही जाती मतलब कुल के लिए जगत सब कर सकता और करता भी परंतु सतस्वरुप संत को धन नही दे सकता ।।२७।

पार ब्रम्ह के कारणे ।। माया तज दे कोय ।।
तब लाग तो सेंसार मे ।। न्यात पात जिऊँ जोय ।।
न्यात पात जिऊं जोय ।। त्याग भावे संकळप किजे ।।
फेर मिलेगी आय ।। ब्याज पैई से ज्यूं दीजे ।।
सुखराम हेत आनंद के ।। दे लो माय कोय ।।
जिऊं बेरागी जीमग्यां ।। न्यात पांत नही होय ।।२८।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज हंसो को कहते है,जगत में मनुष्य के माता,पिता,गुजर ने पे मनुष्य माता,पिता,के लिए न्यातपात करता है याने न्यातीयो को भोजन के लिये बुलाता है और उस धन का सदाके लिये त्यागन करता है या मनमें त्यागन करने का संकल्प करता है। इसपर आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज कहते है की,इसने उस धन का त्यागन किया तो भी वह धन उसे जैसे ब्याजसे पैसे देने पे रक्कम मुद्दलसे जादा आती है वैसे मिलेगी। यह कैसे?जैसे आज इस मनुष्यके यहाँ न्यात हुवा तो लोक इसके घर जीमने आये। फिर आगे और किसीके यहाँ न्यातपात होगा तो ये वहाँ जिमने जायेगा ।

इसप्रकार उस धनको त्यागना चाहा तो भी वह धन भोजनके रुपमें किसीके ना किसीके घरवाले गुरजनेपे न्यातपातके भोजनके द्वारा मिलते ही रहेगा। इसप्रकार पारब्रम्हके कारजमें कोई माया त्याग करेगा तो वह माया, माया त्यागन करनेवालेको वापीस ब्याज बट्टेसे जादा मिलेगी। परंतु किसीने बैरागीयोको जिमाया तो वह न्यातपात नही होती मतलब माता,पिताके मृत्युके पश्चात भोजन किया ऐसा नही होता। न्यातपात करनेसे आज हम भोजन करा रहे तो कल दुजा जिसके यहाँ न्यातपात है वह हमे जिमायेगा। परंतु बैरागीयोको जिमानेसे बैरागी संसारीको वापस नही जिमायेंगे वह खर्चा सदाके लिए हो गया । वह खर्चा न्यातपातके भोजन समान वापीस नही मिलता। इसलिये बैरागीयोको भोजन करानेसे घरके लोग तथा जगतके लोग खुश नही होते इसलिये बैरागीयोको भोजन सभी नही देते जबकी न्यातपात सभी करते। इसीप्रकार आनंदब्रम्हके हेत में कोई खर्चा नही करता और किसीने किया तो जातपात के लोग जगत के लोग तथा माँ,बाप खुश नही होते ।।।२८।।

न्यात पात मे जस कियां ।। जक्त सरावे जोय ।।
संत ना माने रूम भर ।। क्रोडा खर्चो कोय ।।
क्रोडा खर्चो कोय ।। इऊं सत स्वरूप ना रिजे ।।
बिन सतगुरू की टेल ।। नेक आनंद नही भीजे ।।
सुखराम त्याग जप तप किया ।। माया ब्रम्ह खुस होय ।।
जिऊं न्यात पात मे जस किया ।। जक्त सरावे जोय ।।२९।।

न्यातपातमें खर्च करनेसे यश आने पे जगतके लोग सराते है परंतु केवली संत न्यातपातमें करोडो रुपये भी खर्च हुये तो भी थोडासा भी खर्च करनेवालेको सराते नही । संत तो सतगुरु के कार्यमें खर्च करने पे ही सराते है। सतगुरुके सेवामें खर्च किये बगेर सतगुरुको आनंद नही आता। इसकारण सतगुरु ऐसे खर्च करनेवालोसे रिजता नही। सतगुरु न रिजनेके कारण शिष्य में निजनाव प्रगट होता नही। इसपर आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज कहते है,जगतमें जीवोने मायाका त्यागन पारब्रम्हके लिये किया मतलब खर्च किया तथा जप तप चल रहा वहाँ खर्च किया तो माया ब्रम्ह खुश होते है परंतु सतस्वरुप खुश नही होता । इसकारण ऐसे जीवो पे सतस्वरुप नही रिजता ।।।२९।।

सत्तगुरू की म्हेमा कियां ।। रिंजे सतस्वरूप ।।
आणंद पद घट प्रगटे ।। मिटे भ्रम तम धूप ।।
मिटे भ्रम तम धूप ।। करे गुरू पूजा भाई ।।
पार ब्रम्ह खुस होय ।। मुक्त फळ देत पठाई ।।
सुखराम जात कुळ पूजीया ।। सिव सक्ती खुस होय ।।
फळ पावे सेंसार मे ।। कुटम स्हेत कहूं तोय ।।३०।।

सतस्वरुप सतगुरु की महीमा याने रिजाने से सतस्वरुप रिजता और सतस्वरुप रिजने से घट मे आनंदपद प्रगट होता और घटमे आनंदपद प्रगट होते ही हंसका भ्रमरुपी अंधेरा मिट जाता । पारब्रम्ह गुरु की पूजा करने से याने रिजाने से पारब्रम्ह खुश होता और पारब्रम्ह पद का मुक्ति का फल देता । आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज कहते है कि,जैसे जात के लोग और कुल याने माता पिता को रिजाने से जात के लोग तथा माता पिता खुश होते और पुत्र की शादी करा देते । पुत्र की शादी होने से पुत्र की पत्नी सही पुत्र,पुत्री ऐसा परीवार का फल मिलता । इसीप्रकार ब्रम्हा,विष्णू,महादेव और शक्ति को रिजाने से हंस को ३ लोक १४ भवन के माया सुखो के फल मिलते ।।।३०।।

हे सिष तम हम अेकी जात हे ।। अेक बाप का पूत ।।
मो तो मे बळ सारखो ।। नख चख अेकी सूत ।।
नख चख अेकी सूत ।। इधक हममे या होई ।।
पुरण पद प्रताप ।। सतगुरु बगस्यो मोई ।।
जोर किया माने हे नाही ।। तो ही संग पाचूं भूत ।।
हे हंस तम हम अेकी जात हे ।। अेक बाप का पूत ।।३१।।

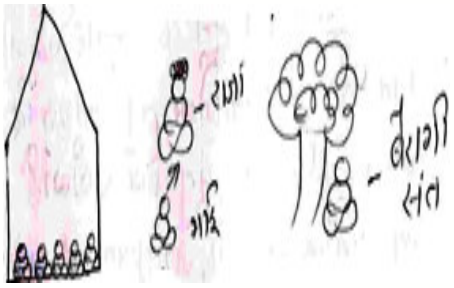

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज कहते है कि,हे शिष्य,तुम और मै एक ही जाती के है और एक ही पिता के पुत्र है । तुममे और मुझमे एक जैसा बल होते हुये नाखून से लेकर आँखतक सारी तजवीज एक जैसी है फिर भी मेरे अंदर यह अंदर अधिकाई है कि मुझमे पूर्णपद का प्रताप है । इस पूर्णपद के प्रताप से मुझे सतगुरु यह पदवी मिली है । इस सतगुरु प्रतापका जोर किया तो भी जगत मानता नही कारण मेरे संग जैसे आकाश, वायु,अग्नी,जल,पृथ्वी ये पाँचो भूत है वैसेही आकाश,वायू ,अग्नी,जल,पृथ्वी ये पाँचो भूत तुम्हारे संग है । पाँचो भूत याने मेरा और जगत के लोगो का शरीर सरीखा है ये शरीर का सरीखापन होने कारण ये जगत मेरे पास के सतस्वरुप के अधिकाई को समजता नही इसलिये मुझे मानता नही और मेरे शरण आता नही ।।।३१।।

पांच सात भाई हुवे ।। तांकी बिध कहुं तोय ।।
अेक राज की चाकरी ।। अेक संत हुवो जोय ।।
अेक संत हुवो जोय ।। तिका सुण रीत हमारी ।।
ग्यान फोज तत्त तरवार ।। ओर नही जोर लगारी ।।
उं वे माने इण संत की ।। तो बेरागी होय ।।
जोर कियां सुखराम के ।। कुळ नही छाडे कोय ।।३२।।

जैसे घर मे पाच सात भाई है । एक भाई राजा की चाकरी करता है तो एक भाई बैरागी संत हुवा है । बैरागी संत के पास ज्ञान की फौज है और तत्त की तलवार है । ज्ञान की फौज तथा तत्त के तलवार के सिवा दुजा जोर कुछ नही है । अब पिछे रहे हुये भाईयो में से जो इस बैरागी संत की बात मान लेगा तो वह भाई बैरागी हो जायेगा । वह बैरागी संत का पिछे रहा हुवा भाई नही मानता रहा और उसपे जोर भी किया तो भी वह कुल नही छोडेगा और बैरागी नही बनेगा ऐसे ही सतगुरु की रित है । सतगुरु में सतस्वरुप प्रगट है । सतगुरु के पास सतस्वरुप ज्ञान की फौज है तथा परमत्त की तलवार है । ऐसी ज्ञान की फौज को तथा तत्त के तलवार को जो जगत का हंस समजेगा वह सतगुरुको मानकर सतस्वरुपी संत बन जायेगा परंतु सतगुरु को जो जगत का हंस जानता नही उसपे सतगुरु ज्ञान के फौज का जोर करे तथा तत्त के तलवार का जो बतावे तो भी वह माया ब्रम्ह को नही छोडेगा ।।।३२।।

जो भाई थो राज मे ।। करे जोर वो आय ।।
ओ बिडद उण कूं छाजसी ।। चाकर राख्यो लाय ।।
चाकर राखे लाय ।। संत इऊं हुवे जुग माही ।।
पार ब्रम्ह लग दोड ।। सिध्ध प्रचा दे जाही ।।
सत्त स्वरूप बिग्यान चल ।। सो बिध हे मुज माय ।।
जो भाई कुळ माय थो ।। जोर दिखावे लाय ।।३३।।

जो भाई राजा के चाकरी में था वह भाई पिछे रहे हुये भाई पे जोर करके उस भाई को राजा के चाकरी में रखा तो वह भाई राजा के चाकरी में रह जायेगा और भाई को राजा के चाकरी में रखा इसलिये जगत राजा के चाकरी में रखनेवाले की शोभा भी करेगे । और वह खुद राजा के चाकरी में है वैसे के वैसा भाई का किया यह बिड्द भी राजा के चाकरी मे रखनेवाले भाई को शोभेगा । इसप्रकार पारब्रम्ह के संत जो जगत मे होते है उनकी रित है । ये पारब्रम्ह तक के दौड्वाले संत जगत में सिध्द पर्चा देते है वह सिध्द पर्चा जगत के लोगो को भांते है । इसलिए जगत के लोग ऐसे पारब्रम्ह के संत की शोभा करते है और इस पारब्रम्ही संत ने जगत के मनुष्य को सिध्द पर्चा में लगाया तो वह जगत का मनुष्य भी सिध्द पर्चा में लग जाता है । जगत का मनुष्य पारब्रम्ही संत के बराबर सिध्द पर्चा करना सिख लेता है तो सिध्दपर्चा सिखानेवाले पारब्रम्ही संत के बिड्द की भी शोभा होती है । सतगुरु में सतस्वरुप विज्ञान की चाल है वह सतगुरु विज्ञान के बल पे दुजे भाई पे जोर करेगा जैसे पारब्रम्ही संत ने भाई पे जोर किया था वैसे करेगा तो भी दुजा भाई आयेगा नही ।।।३३।।

नही जोर को काम ।। देस ओ मुलक न्यारो ।।
मना ई चाले संग ।। सत्त कूं प्रसे प्यारो ।।

कुळ मे हब थब होय ।। जोर सुंई ले घर आवे ।।
कुळ बाहर बिन प्रीत ।। नार केसें घर लावे ।।
सुखराम कहे यूं जीव सो ।। सब मेरो प्रवार ।।
बळ सूं संग कोई ने करे ।। सब मे जोर बिचार ।।३४।।

सतस्वरुप यह देश होनकाल देशसे न्यारा है। उस देशमे किसी पे जोर करनेसे वह उस देश मे नही आ सकेगा। उस देशमें जिसे मनसे ही चलने की चाहना रहेगी वही चल पायेगा। उस देश में चलनेवाले को अपना मायावी मन तथा पाच आत्मा निजमन से त्यागनी पडेगी। जब वह मन और पाच आत्मा सतगुरु को रिजाके त्यागेगा तबही वह सत परमात्मा को पायेगा और वह हंस सत परमात्मा को प्यारा लगेगा। ऐसा प्यारा लगनेवाला संत ही उस देश में जा सकेगा। मनसे न चलनेवाले पे जोर किया तो भी वह अपना निजमन सतगुरु को नही दे पायेगा और सतगुरु को निजमन न देनेके कारण उस हंसका मन और पाच आत्मा यह माया हंससे निकलेगी नही। ऐसी पाच आत्मा तथा माया हंससे न निकलने के कारण हंस मायाके साथ वहाँ नही जा पायेगा । वहाँ माया ढकलने पे भी ढकले नही जाती। वहाँ सिर्फ जीवब्रम्ह जा सकता इसलिये उस देशमें ले जानेके लिये जोरका काम नही चलता। मनसे ही चलनेका काम चलता। जैसे किसी पुरुषको स्त्री पत्नी बनाके लाना है तो वह अपने कुल याने समाज से ला सकता । उस पुरुषका उस स्त्रीके साथ बोलाचाल भी हुई होगी और वह आनेको तयार नही भी रहे तो भी उसपे जोर डालकर घरपे लाते आता परंतु जो स्त्री कुलकी नही है,कुलके बाहर की है उसे जोर डालके कैसे लाते आयेगा?उस स्त्रीको लानेवाले पुरुषसे प्रेम होगा,प्रिती होगी तो उस पुरुष वह स्त्री लाते आयेगी। इसीप्रकार होनकालके सभी जीव मेरा परीवार है परंतु जैसे बिना कुलके स्त्रीको बलसे नही लाते आता,सिर्फ प्रितीसे लाते आता। बलसे लानेकी कोशिश भी की तो भी उस स्त्रीके पिछे उसके कुलका जोर रहता वे उसे ले जाने नही देते ऐसेही सतगुरुके साथ सतगुरु के सतशब्दसे प्रित होगी वही हंस सतलोक मे सतगुरु के पिछे आयेगा ।।।३४।।

कुंडल्या ।।

धिग धिग उण समज कूं ।। लाणत नित्त हजार ।।
आणंद पद की भक्त मे ।। डाकन पडे गिंवांर ।।
डाकन पडे गिंवांर ।। साच देख्यो तोई आई ।।
झूट जक्त को मोहो ।। अलप सोही तजे न भाई ।।
सुखराम दास हिरो मिल्यो ।। जे देहे मे दे डार ।।
धिग धिग उण समज कूं ।। लाणत नित हजार ।।३५।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज जगत के लोगो को कहते है की,तुम्हे मानव तन रुपी

हिरा मिला है । यह हिरा पाने के लिये ८४००००० योनी के महादु:ख भोगने पडे । सिर्फ इस मानव तनसे ही आनंदपदकी भक्ती करके आनंदपद प्राप्त किये जाता है । ऐसा भारी मनुष्य देहरुपी हिरा मिला है सच्चे सतगुरु भी मिले है तो भी जगत कुटूंब परिवार के पत्नी,पुत्र के तथा धन के झूठे मोह के कारण तुम्हे आनंदपद सुजता नही । ऐसे झूठे जगत के साथ का रहना तेरे थोडे समय का है फिर भी तुझे जगत का,कुटुंब परिवार का पत्नी,पत्रका धन का मोह तजते नही आता । यह मोह तजना याने कुटूंब परिवार छोडना क्या?तो नही । सभी संसार के कर्तव्य पुरे करना लेकिन उनमे से मोह निकालकर निजमन सतगुरु को देना और यह तुम नही करते इसलिये गुरु महाराज कहते ऐसे तेरे हलके समज को धिक्कार है,धिक्कार है,हजार लानत है । तुझे सतगुरु का विश्वास आने पे भी तू सतगुरु के भक्ती मे एकदम छलाँग डालता नही और ऐसे भारी मनुष्यरुपी हिरे को माया मोह के डोह में डालकर गमा रहा है ऐसे तेरे बुध्दी को धिक्कार है,धिक्कार है । हजार लानत है ।।।३५।।

अण समजे सिर दोस नही ।। स्मजवान सिर खून ।।
जाणर म्हेमा कम करे ।। ज्युं बावे अन भून ।।
ज्यूं बावे अन्न भून ।। क्हा निपजे वहां भाई ।।
युं सतगुरू की मेहर ।। समज पर चडे न जाई ।।
सुखराम क्हे फळे फुले नही ।। रहे समज सूं सून ।।
अण समजे सिर दोस नही ।। समज वान सिर खून ।।३६।।

जिसे सतगुरु सतस्वरुप है यह नही समझा ऐसे शिष्य को दोष नही परंतु जिसे सतगुरु सतस्वरुप है यह समजा है और वह शिष्य सतगुरु से कम और होनकाल से जादा प्रिती रखता है उसके सिर भारी दोष है। जैसे भुना हुवा अनाज बोने से वह उगता नही ऐसे ही ऐसे समजवान शिष्य पे सतगुरु की मेहर होती नही। जैसा भुना हुवा अनाज फुलता नही, फलता नही इसीप्रकार समजवान शिष्य सतस्वरुप ज्ञान विज्ञान से फुलना फलता नही । ।।३६।।

कवित ।।

समज वान सिर म्हेर ।। पद की तां दिन होवे ।।
करे बांत कांहा इधक ।। देख नर नारी रोवे ।।
केतो कर कुळ त्याग ।। संत सर्णे नर आवे ।।
कांय सकळ धन माळ ।। साच गुरू च्रणा लावे ।।
सुखराम दास बाधी तिका ।। मा सो रखे न कोय ।।
तब उजागर हंस व्हे ।। गुरूमन रिजे जोय ।।३७।।

समजवान जो मोह माया को झूठा समजता है और झूठा समजके भी उसी में मगन रहता

है ऐसा शिष्य जब त्रिगुणी माया को झूठा समजेगा और साई को असली सुख का सत्ताधारी समजेगा उसके लिये ब्रम्हपिता तथा इच्छा माता को त्यागन करेगा,त्यागन करके संत के शरणे आयेगा और धनमाल से मन निकालकर गुरु के चरण में विश्वास लायेगा यह देखकर होनकाल नर और माया नारी रोयेगी की अब यह हंस हमसे निकल गया। तो यह कैसे है जैसे जगत में हम देखते की कोई वेदी गुरु का शिष्य बनना चाहता । वह वेदी गुरु की ही बाते करता और अपने कूल के लोगो को छोड्के वेदी गुरु का बन जाता उसे बैराग मे ही सुख लगता तब उसके कुलके लोग रोते की यह हमे छोड्के चला गया। आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज कहते है की,जब सतस्वरुप के प्रती शिष्य की ऐसी समज आ जायेगी तब समजवान शिष्य पे पद की मेहेर होगी ऐसा शिष्य पद पाने में जो जो बाधाये है वे बाधाये मासाभर भी रखता नही ऐसा उजागर होकर सतगुरु के चरणमें रहता उस वक्त सतगुरु का मन उसपे रिजकर प्रसन्न होता । ।।३७।।

कुंडल्या ।।

समजवान के त्याग बिन ।। कृपा बने न काय ।।
वो सत्त जाणे रीत कूं ।। तन मन धन दे जाय ।।
तन मन धन दे जाय ।। बात कीजी काई भारी ।।
नही बणे ज्यांहा लग ।। कळयां फूले नही सारी ।।
सुखराम दास बळ तब पडे ।। करडी करे बजाय ।।
स्मज वान के त्याग बिन ।। किरपा बणे न काय ।।३८।।

समजवान शिष्य सतगुरु को सत्त जानता है। संत सतगुरु को तन,मन,धन,भी अर्पण करता है। सत्तज्ञानकी भारी भारी बाते भी करता है परंतु त्रिगुणीमाया का लगाव त्यागता नही। कुल कुटूंब,स्त्री,धन,पुत्र इससे मोहमाया रहती। ऐसी माया से लगाव रहने के कारण निजमन की सारी कलियाँ सतगुरु के प्रती फुलती नही । सतगुरु के प्रती प्रेम आता नही और प्रेम न आने के कारण सतगुरु की कृपा उसपे होगी नही। ऐसा शिष्य माया त्यागने के प्रती करडा याने कट्टर बनके मायाको त्यागन करेगा,सुत,बित्त,स्त्री,कुल और त्रिगुणी माया से मन निकाल लेगा तब उसका बल सतगुरु के निजमन पे पड्गा । ऐसा सतगुरु पे बल पडने पे सतगुरु के निजमन की कलियाँ फुलेगी । सतगुरु के निजमन की कलियाँ फुलते ही शिष्य पे सतगुरु की मेहेर होगी और शिष्य के घट में नाखुन से लेकर चखतक सतस्वरुप प्रगट होगा ।।।३८।।

कोईक अंधेरे रात को ।। त्रवर फूले जोय ।।
ओर चानणी रात मे ।। कळीया सुधी होय ।।
कळीयां सुधी होय ।। यूं ओ फेर कवावे ।।
समज जिसी बिध होय ।। फूल ज्यांही सुख पावे ।।

सुखराम म्हेर की फेर ओ ।। और फेर नही कोय
कोईक अंधेरी रात को ।। त्रवर फूल जोय।।३९।।

जैसे कोई फुल अंधेरे रातमें फुलते तो कोई फुल चांदनी रात मे फुलते । सभी फुल अंधेरे रात में नही फुलते तथा सभी फुल उजाले रातमें नही फुलते । कुछ फुलोकी कलियाँ सुधी होनी है तो उसे अंधेरा ही लगता उसे चानना नही चलता तथा कुछ फुलो की कलियाँ सुधी होने के लिये चानना ही लगता अंधेरा नही चलता। जैसे फुलो का स्वभाव होगा वैसे ही स्थिती मिली तो उस फुलको फलनेके काम आता । इसीप्रकार भोले समजके संतको सत्तज्ञानके समजकी बिलकुल जरुरत नही होती और सतगुरुको भी खुप(बहुत)ज्ञान नही देना चाहिये। भोला संत सतगुरुके शरण आया की,सत परमात्मा घटमें प्रगट हो जाता। ऐसे समजवान शिष्य में नही होता। समजवान शिष्य जबतक सतज्ञानसे अपनी कसर भिन्न भिन्न तरह से निकालता नही तबतक सतगुरुकी मेहेर उसपे होती नही। कभी कभी यह किसी समजवानकी कसर सहजमें निकल जाती तो कभी कभी किसी समजवानकी यह कसर करडा बने बगेर नही निकालती। इसलिये शिष्योमें सतगुरुके मेहेरका यह फरक दिखता। यह मेहेरका फरक सतगुरुके स्वभाव का नही रहता । यह सारा जगत सतगुरुका ही परीवार है। ऐसे एक परीवार में सतगुरु भेद नही करते रहते । यह भेद शिष्यसे होता रहता। कुछ शिष्य मायाका तथा होनकालका बल रखते और कुछ शिष्य मायाका तथा होनकालका बल नही रखते। जो शिष्य होनकालका तथा मायाका बल रखते वे शिष्य सतगुरुके वश नही होते उन्हे वश होनेका प्रयास करना पडता। जो शिष्य निर्बल रहते वे शिष्य सहजमें सतगुरुके वश हो जाते उससे उनके उपर सतगुरुकी मेहेर तुरंत हो जाती । ऐसा यह शिष्यके समज समजका फरक रहता। उसके फरक अनुसार शिष्यपे गुरुकी मेहेर का बदल होता। सतगुरु की मेहेर भोलेपे भोलेके अनुसार होती तो समजवानपे समजवान के अनुसार बनती। भोलेके अनुसार समजवानपे नही बनती तो समजवानके अनुसार भोलेपे नही बनती। ऐसी सतगुरु के मेहेरमें फेर रहता सतगुरुके सतस्वरुपमे फेर नही रहता । सतस्वरुप सबके लिए सरीखा रहता। ऐसी अलग अलग मेहेरका कारण शिष्यके समजके सिवा दुजा कोई कारण नही रहता ।।।३९।।

कवत ।।

तन मन अरपे नाय ।। बचन बोलो संत सुरो ।।
लोथ पोथ सब बात ।। निज मन राखे दुरो ।।
पद चावे आनंद ।। बुध अेती नही आवे ।।
ज्या हा सतगुरू बिच रेस ।। काड सब दूरी बावे ।।
सुखराम केहे संभाळ मन ।। हिरदे करो बमेक ।।
पारस लोहो को आंतरो ।। अंग न पलटे देख ।।४०।।

और शिष्य अपना तन,मन तो सतगुरुको अर्पण नही करता,सिर्फ शुरवीर संतकी तरह

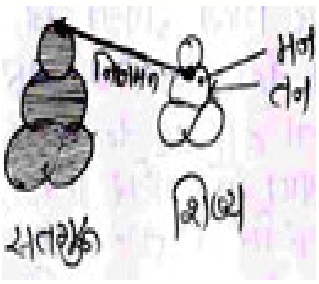

वचन बोलता है ।(यह तन,मन,धन आपका ही है,आपके लिये प्राण और शरीर मै देने के लिये तैयार हूँ । ऐसे शुरवीरकी तरह वचन बोलता है)और सभी बातो मे लथपथ(घुल मिलकर)होकर रहता है परंतु अपना निजमन दूर रखता है । इस तरह से निजमन तो गुरु से दूर रखता है । इस तरह से निजमन तो गुरुसे दूर रखता है और आनंदपदकी चाह करता है । तो इतनी भी बुध्दी नही आती की सतगुरु के बारे मे जो अपने अंदर रेष हो वह रेष तो निकाल कर दूर फेकनी चाहिये । तो मनमे विचार करके हृदय मे विवेक करो कि यदि पारस से लोहा दूर रहा तो लोहा सोना बनेगा क्या ? इसी प्रकार से शिष्य मायावी से निकल सतस्वरुपी बनेगा क्या ?

नोट–(आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज शिष्य को कहते है,हे शिष्य तू सतगुरुको तन,मन अर्पण कर मतलब तन,मनसे तेरा मोह निकाल । तन,मन अर्पण कर याने सतगुरु को तन, मन नही देना पडता,सतगुरु को तन,मन कभी भी नही चाहिये रहता । सतगुरु को सिर्फ निजमन चाहिये रहता ।)।।४०।।

कुंडल्यो ।।

जब सतगुरू सिष जाणीयो ।। अे अंग दरसे माय ।।
बोले ब्हो आधीन होय ।। निज मन न्यारो नाय ।।
निज मन न्यारो नाय ।। पुत्र ज्युं पदवी चावे ।।
मात पितासूं हेत ।। ताय सूं इधकी लावे ।।
सुखराम दास तब मन रे ।। ज्युं जळ पय संग जाय ।।
सतगुरू सत्त तब जाणीये ।। अे अंग दर्से माँय ।।४१।।

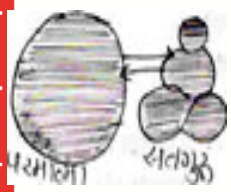

जब सतगुरु को शिष्य ने जाना तब शिष्य के स्वभाव निम्न तरीके के दिखते है । परमात्मा यह सब ३ लोक १४ भवन का आधार है । मुझे भी आदि से अबतक परमात्मा का ही आधार था और है । ऐसा परमात्मा जो सब मे है वही मेरे सतगुरु है । उस परमात्मा में तथा सतगुरु में फरक नही है । ऐसा शिष्य को जब सतगुरु दिखने लगता तब शिष्य का प्राण सतगुरु के आधीन हो जाता और उसका निजमन सतगुरु में मगन रहता । जैसे जगतमें पुत्र पिताके साथ रमता उससे भी अधिक शिष्य सतगुरुमें रमता तथा पुत्र जैसे मात–पितासे हेत करता उससे भी अधिक शिष्य सतगुरुसे हेत करता । आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज जगतको कहते है जैसे दुध में जल मिल जाता वह जल दुधसे न्यारा नही दिखता ऐसेही शिष्यका निजमन गुरुके निजमनसे घुल जाता । जब शिष्य में ये स्वभाव दिखते तब वह शिष्य सतगुरु को बराबर पहचानता यह समजना ।

अगर ये स्वभाव शिष्यमें नही दिखते तो समजना शिष्यको सतगुरु सतस्वरुप है,महासुखके विधाता है,महादु:ख के हर्ता है यह समजा नही ।।।४१।।

कवत ।।

ज्यूं राजासें रेत ।। सर्ब कापे घर माही ।।
सब चाकर आधीन ।। हुकम लोपे कुछ नाही ।।
अंतर रहे भै माय ।। रात दिन अंग न भूले ।।
भूप भरोसो मांय ।। नख चख अंग सब फूले ।।
सुखराम दास अे अंग रे ।। जब लग नही सिष मांय ।।
तब लग गुरू न पिछाणीया ।। बात बणावो जांय ।।४२।।

जैसे राजासे राजा की सभी प्रजा अपने घर में रहते भी सदा डरती है तथा राजा के साथ चाकर के समान आधीन बनके रहती है । राजाका कोई भी हुकूम लोपती नही तथा सभी प्रजाको राजासे अंतरमें भारी भय बना रहता और साथ में हमारा राजा हमको भारी सुख दे रहा है और देते रहेगा इसलिये सभी प्रजाका मन तथा प्रजाके शरीरका नखचख फुला रहता। हमपे कोई भी दुजा राजा जुलूम नही कर सकेगा इतना राजा पे भरोसा रहता । इसप्रकार सतगुरु के साथ शिष्यका बर्ताव बनेगा मतलब सतगुरु से शिष्यका निजमन डरते रहेगा। सतगरुसे शिष्यका निजमन आधीन रहेगा और शिष्यके निजमनको सतस्वरुप सतगुरुने ही मुझे आज दिन तक सब सुख दिये और आगे भी वे ही सुख देते रहेंगे ऐसा भरोसा रहेगा । साथमें सतगुरु पे ऐसा भरोसा रहेगा की,काल कैसा भी जुलमी कसाई रहा तो भी मेरा कुछ नही कर सकता। इसकारण शिष्य निजमनसे,मनसे तथा शरीरसे नखसे चख तक फुला रहता ऐसा स्वभाव शिष्यका हुवा तो समजो सतगुरुको शिष्यने पहचाना । अगर शिष्यमें ये स्वभाव नही है तो शिष्यने सतगुरुको पहचाना नही यह समजना। वह शिष्य असलमें सतगुरुको समजा नही फिर भी समजा करके बातोसे बना रहा है ऐसे समजना ।।।४२।।

क्हा भूप कहूं तोय ।। क्हा इंद्र सुण होई ।।
क्हा बिस्न कंहु ईस ।। क्हा ब्रम्हा दिक सोई ।।
क्हा सब औतार ।। क्हा सो ब्रम्ह कहावे ।।
होण काळ के माय ।। सरब अे जाय समावे ।।
सुखराम दास यां सब सिरे ।। सतगुरू साहीब होय ।।
ज्यां सिर गुरू करणी नही ।। सत स्वरूपी जोय ।।४३।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज शिष्य को कहते है की,सतगुरुके सामने ९ खंड का राजा ३३०००००० देवता का राजा इंद्र,बैकुंठ का राजा विष्णू,कैलास का राजा शंकर,सतलोक का राजा ब्रम्हा तथा सब अवतार और इन सबका राजा पारब्रम्ह कर्तार ये

कुछ नही है याने सतगुरु के सामने इन सभी बडे बडे राजावो की कोई पहुँच नही है। ये सभी राजाये जादा से जादा होनकाल तक पहुँचाते है और होनकाल तक ही सुख जीवोको दे सकते है। ये होनकाल तक के राजा हंसका कालका दु:ख नही मिटा सकते। यह होनकालके दु:ख सतस्वरुप साहेबही मिटा सकता। यह सतस्वरुप आदिसे ही होनकालका राजा है। इसके आधारपर होनकालके सब राजे चलते। ऐसा साहेब याने सतगुरु है। इसप्रकार सतगुरु साहेब यह सबके उपर है। इसप्रकार सबके सिरे सतस्वरुप सतगुरु है इसकारण उसके उपर कोई होनकाल का गुरु या होनकाल की क्रिया नही रहती ।।।४३।।

केवळ को सुण बीज ।। गेब सूं जन मे आवे ।।
नही करणी के माँय ।। ग्यान सुंई कदे न पावे ।।
ना केवळ ऊपदेश ।। मांड मे रहे न कोई ।।
ज्यांहा प्रगटे जन माय ।। सो तारे हंस सोई ।।
सुखराम अनंत ले उधऱ्या ।। से जन हंस जुग माँय ।।
ग्यानी ध्यानी जक्त सूं ।। आ कळ लखी न जाय ।।४४।।

संत केवल का बीज मायाके करणीसे प्राप्त नही कर सकता तथा होनकालके ज्ञानसे भी कभी प्राप्त नही कर सकता तथा संत अमरलोक जाने के बाद लिखके गये हुये संतके केवल उपदेश से भी केवल का बीज प्राप्त नही होता। केवली संत अमरलोक जाने के बाद उनकी उपदेश बाणी जगत में रहती है परंतु केवल का बीज जगत में नही रहता वह बीज संत के साथ चले जाता। इसलिये संत केवलका उपदेश का चिंतन करने से भी केवल का बीज नही उगता। केवलका बीज संतमें गेबसे याने परमात्मा से आता। वह बीज मायासे या ब्रम्हसे नही आता। वह साई आदिसे जो सबमे रम रहा है उससे आता । जब संतको उपदेश देनेवाला सतगुरु परमात्मा दिखने लग जाता और उपदेश देनेवाले संत से अकबक प्रेम हो जाता तब हंसके आत्मा में जो केवल परमात्मा है वह एकाएकी शिष्य के भी समज में न आते हुये प्रगट हो जाता। ऐसा केवल का बीज जिस संत में प्रगट होता वह संत अनेक हंसो को तारता। ऐसे जो जो संत जगत में बने उन्होंने अनंत जीवोका उध्दार किया। यह कैवल्य की उध्दारनेकी कला होनकाली ज्ञानी,ध्यानी तथा जगत के लोगो को समजती नही। यह तो जिस संतमें यह कला प्रगट हुई उसीको समजती ।४४।

किण कुद्रत घट माय ।। सत्त सो आण बिराजे ।।
जळे पीव संग नार ।। जक्त सूं नेक न लाजे ।।
सूरो रण मे जाय ।। घाव सनमुख सो लीया ।।
धस्यो क्हा घट माय ।। मरण से नेक न बीया ।।
सुखराम दास घट ब्रम्ह तो ।। आगे अब ही होय ।।
जब बिग्यान सो ऊपनो ।। तब आयो कुण जोय ।।४५।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज जगत के लोगो को पूछ्ते है की,सती स्त्री में पती के पिछे जलने का सत्त कहाँ से आता?पहले राजस्थानमें स्त्री पती के साथ चलनेमें भी शरमाती थी । इतनी वह घर के बडे लोगो की मर्यादा रखती थी । पती गुजरने पे उसको पती के साथ जाने में नेक मात्र लज्जा नही आती और आनंद से पती के साथ जल जाती । वह पती के साथ जलनेका सत्त सती में कहाँसे आया? कौनसे कुद्रत से उस सती स्त्री के घटमें आया? वैसेही शुरवीर रण में गोलियोके घाव सनमुख लेता । उसे गोलियाँ लगने पे मृत्यु होगा ऐसा डर उसके हृदय में बिलकुल नही आता । ऐसा शुरवीर के तन में क्या घुस गया की वह शुरवीर लढाई में गोलियाँ मारने में और गोलियाँ खाने में खेल समजता? ऐसे तो सती के घट में तथा शुरवीर के घट में आगे से जो जीवब्रम्ह था वही जीवब्रम्ह आज है फिर इन दोनो में क्या फरक हुवा की सती स्त्री पतीके साथ जलनेमें आनंद ले रही थी और शुरवीर बैरीको गोलियाँ मारने में और बैरी की गोलियाँ खाने में डर नही रहा था तो यह सत दोनो में कहाँ से आया? तो आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज जगत को कहते है की,ये बल इन दोनो में सतविज्ञान से प्रगट हुवा । यह विज्ञान किसी त्रिगुणीमाया के क्रिया करणी से प्रगट नही हुवा। यह विज्ञान कुद्रत से प्रगट हुवा । यह विज्ञान कुद्रत से प्रगट कैसे होता यह आजदिन तक होनकाली किसी ज्ञानी,ध्यानी को समजा नही । इसीतरह से संत में केवल प्रगट होता । वह कैसे प्रगट होता यह किसी होनकाली ज्ञानी,ध्यानी को समजता नही ।।।४५।।

यां तीना के मांय ।। सत्त कृपा कर आवे ।।
सो घट घट मे नाय ।। सत स्वरूप क्हावे ।।
जिऊं हिरे की परख ।। बुध वा सब मे नाही ।।
इऊं सतस्वरूप कहाय ।। कोण समजे सत माही ।।
ज्यूं जेसा त्यूं जीव हे ।। जिऊं सतस्वरूप पिछाण ।।
सुखराम दास कहे हाक दे ।। सब नर सुणियो आण ।।४६।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज जगत के ज्ञानी,ध्यानी तथा लोगो को कह रहे है की,यह सत्त सती शुरवीर तथा संत इन तीनो में सतस्वरुप की कृपा से आता है । आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज कहते है की,जगत में लोग तो बहुत है परंतु सभी में हिरे की परीक्षा करने की बुध्दी न होने के कारण सभी को हिरे की परीक्षा नही आती । वैसही वह सतस्वरुप तो सभीके घटमें ओतप्रोत भरा है फिर भी सभी स्त्री,पुरुषो के घट में वह सत्त नही प्रगटता । वैसेही सतस्वरुप सबके घटमे ओतप्रोत भरा है परंतु उसे समजने की बुध्दी सबमे न होने के कारण सभी में जैसे सती,शुरवीर तथा संत में सत्त प्रगट हुवा वैसे सत्त प्रगट नही होता । सतस्वरुप तो सदा एक सरीखा रहा है और एक सरीखा रहेगा फिरभी शुरवीर,सती तथा संत में सतस्वरुप का परीणाम अलग अलग है । शुरवीर मरने पे उसे

परी स्वर्ग में ले जाती मतलब शुरवीर की पहुँच स्वर्गतक ही रहती है वह आनंदपद नही जाता। ऐसेही सती मरने पे बैकुंठके आगेके सतवाड्के लोकमें जाती। वह भी आनंदलोकमें नही जाती । परंतु केवली संत शरीर छोड्नेके बाद सतस्वरुपमें जाता । वहाँ वह सदाके लिये महासुख लेता। आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज सभी स्त्री पुरुषोको समज देके समजा रहे की यह फरक सतस्वरुपके कारण नही हुवा । यह फरक जिव के चाहना से हुवा। शुरवीर पुरुष ने राजा के लिये रणमें जितने की चाहना की थी इसलिये उसमे सतस्वरुप ने शुरवीरता तक सत डाला। सती स्त्रीने पतीके साथ सती बननेकी चाहना रखी थी तो उस सती स्त्री में पतीव्रता का सत डला। संतने होनकालके सभी सुखो को त्यागकर सतस्वरुप को ही पाने की चाहना की थी तो उसमे वह सतस्वरुप असल में जैसा है वैसा प्रगट हो गया ।।।४६।।

|| कुंडल्या ||

आत्म ज्ञानी संत की ।। आ रेणी आ चाल ।।
सब दासन को दास व्हे ।। गेहे मन राखे पाल ।।
गहे मन राखे पाल ।। नीच सब ही बिध त्यागे ।।
सुभ ऊत्तम सो चिज ।। सुणर सब ही सूं लागे ।।
तन मन धन सुखराम के ।। उन के हस ख्याल ।।
आतम ग्यानी संत की ।। आ रेणी आ चाल ।।४७।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज ने जगत में आत्मज्ञानी,ब्रम्हज्ञानी,तत्वज्ञानी तथा सतस्वरुप ज्ञानी ऐसे चार ज्ञानी रहते करके ४७ से ५० कुंड्ली तक बताया है। आत्मज्ञानी संत जगतमें सभी दासन का दास होकर रहता। वह मायाकी सभी उत्तम सी चिजे ग्रहण करता। वह सभी निच विधीयाँ त्यागन करता। उसका मन या तन निच चिजोके ओर गया तो वह अपना मन तथा तन कड्काई से रोक के रखता। तन,मन,धन त्रिगुणी मायामें देना यह उसका हसना खेलना समान रहता। इसप्रकार आत्मज्ञानी संत की रहनी तथा चाल रहती है ।।।४७।।

ब्रम्ह ग्यानी की चाल आ ।। सुणो सकळ नर आय ।।
पाप न माने पून्न कूं ।। सासो सोग न माँय ।।
सांसो सोग न माँय ।। आतमा माने नाही ।।
अेक ब्रम्ह गुण रूप ।। देख ले सब के माई ।।
सुखराम भोग सब ही करे ।। मन माने सो खाय ।।
ब्रम्ह ग्यानी की चाल आ ।। सुणो सकळ नर आय ।।४८।।

ब्रम्हज्ञानी आकाश,वायू,अग्नी,जल,पृथ्वी के गुणो की,शब्द,स्पर्श,रुप,रस,गंध यह मायावी आत्मा मेरी है यह मानता नही। वह मै ब्रम्ह हुँ मै आत्मा नही हुँ ऐसा समजता। उसीप्रकार

सभी जीव यह ब्रम्हगुण के रुप है । वे आत्मा के रुप नही है ऐसा समजता । मै ब्रम्ह हुँ,मै माया नही हुँ इसकारण मुझे कर्म लगते नही। अशुभ कर्म यह पाप है और शुभ कर्म यह पुण्य है। जब ब्रम्ह को कर्म ही नही लगते तो ब्रम्हको पाप पुण्य कहाँ से लगेगे ऐसा समजता। ब्रम्ह मरता नही,ब्रम्ह अमर है इसकारण कोई मरा तो भी वह मरनेवाला आदिसे ही ब्रम्ह था,आज भी ब्रम्ह है,वह माया नही था,वह सदा के लिये अमर है वह मरता ही नही इसलिये मृतक के पिछे उसे दु:ख या फिकीर होती नही । मै ब्रम्ह हुँ,मै आत्मा नही हुँ इस कारण पाप पुण्य लगते नही यह सोचकर ज्ञानी मन माने सो निच उंच कर्म करके सभी भोग भोगता। इसप्रकार की जिस ज्ञानीकी चाल रहती उसे ब्रम्हज्ञानी कहते ।।।४८।।

तत ग्यान हां ऊपनो ।। तां को मत बिचार ।।
आ रेणी आ मूठ हे ।। सुणो सकळ नर नार ।।
सुणो सकळ नर नार ।। ब्रम्ह देखे सब मांही ।।
विषे भोग सब त्याग ।। करण क्रिया कुछ नाही ।।
सुखराम ब्रम्ह सो आप ही ।। अेसी रहे उर धार ।।
तत ग्यान ज्हां उपनो ।। तां को मत बिचार ।।४९।।

आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज सभी स्त्री पुरुषो को तत्वज्ञानी के मत,विचार तथा रहणी कैसे रहती यह समझा रहे है। जैसे ब्रम्ह ज्ञानी मै ब्रम्ह हुँ ऐसे उर मे धारण करता वैसेही तत्वज्ञानी भी मै ब्रम्ह हुँ ऐसा उरमें धारण करता तथा ये तत्वज्ञानी जैसे ब्रम्ह ज्ञानी सबमे ब्रम्ह देखता है परंतु तत्वज्ञानी ब्रम्ह ज्ञानी के समान विषयो का भोग नही करता तथा आत्मज्ञानी के समान त्रिगुणी माया की क्रिया करनी नही करता ।।।४९।।

सत स्वरूप की भक्त की ।। हाल चाल कहूं आण ।।
राज रीतसी रीत सो ।। सिष गुरू अेम पिछाण ।।
सिष गुरू अेम पिछाण ।। सत्त कुदरत घट जागे ।।
चडे ऊलट तन मांय ।। ध्यान समाधी लागे ।।
सुखराम प्रेम से ऊबके ।। अक बक दुध ऊफाण ।।
सत स्वरूप की भक्त की ।। हाल चाल कहुं आण ।।५०।।

जैसे राजासे प्रजा अपने खुदके घरमे रहते हुये भी सदा डरती,चाकरके समान आधिन बनके रहती,राजाका कोई भी हुकूम नही लोपती,राजाका पूर्ण भरोसा रखती और राजा पे नख से चखतक फुली रहती । इसप्रकार का राजाके साथ प्रजाका जरासा भी भूल न पड्ते रातदिन अखंड्ित स्वभाव बना रहता । आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज कहते की जैसे राजा और प्रजाके आपस मे रीत रहती वैसेही गुरु और शिष्यकी रीत रहती ये सभी जानो । ऐसे शिष्यके स्वभावसे सतगुरु खुश होते और सतगुरु रिजनेके कारण शिष्यके घटमे सत याने कुद्रत जागृत होती । इस कुद्रतके सत्तासे शिष्य अपने ही घटमे बंकनालके

रास्तेसे उलटकर ब्रम्हंड्मे चढ जाता और समाधी देशमे उसे ध्यान समाधी लगती । आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज कहते है कि ऐसे शिष्यके घटमे दूध उबलने के बाद जैसे उफानता वैसे सतगुरु के लिये प्रेम अकबक होकर उफनता ।।।५०।।

माया घेऱ्यो जीव कूं ।। बोहो बिध कळा बणाय ।।
जाय न सक्के छूट कर ।। गेहे बांध्यो जग माय ।।
गेहे बांध्यो जग माय ।। ब्होत पासी गळ डारी ।।
जात पात कुळ ग्यान ।। जक्त केबत बिध सारी ।।
सुखराम पदी धन पेक अे ।। घट घट बेठा आय ।।
माया घेऱ्यो जीव कूं ।। ब्हो बिध कळा बणाय ।।५१।।

इस जीव को माया ने बहुत तरह की कला करके घेरकर बैठी है । यह जीव माया से छूटकर जा नही सकता है । इस जीव को माया ने संसार मे बाँध दिया है । इस जीव के गले मे कई तरह की फाँसीया मायाने डाल दिया है। जाती की फाँसी,संसार के केबत (केबत यानी लोगो का कहना,संसार के लोग मुझे क्या कहेगे)की फाँसी,इस प्रकार जगत की फाँसीयाँ और पदवी की फाँसी,धन की फाँसी,ये घट-घट मे पक्की बैठी है ।।।५१।।

जात पांत कूळ करम की ।। अे पासी दे खोय ।।
तो धन पासी छुटे नही ।। आ ब्हो भारी होय ।।
आ ब्हो भारी होय ।। सूर कोई तो डर जावे ।।
तो पासी गळ मांय ।। ग्यान की ब्हो बिध आवे ।।
सुखराम ग्यान की काट दे ।। तो केबत गळ माय ।।
अे पासी सब तोड दे ।। तो पद प्रगटे आय ।।५२।।

इस प्रकारसे माया इस जीव को कोई जीव जाती-पातीकी फाँसी मे,कुल की फाँसी मे,कर्मो की फाँसीमे और इन फाँसीयो को कोई नही मानेगा तो धन की फाँसी नही छुटेगी । क्योंकी धन की फाँसी बडी भारी होती है और कोई शुरवीर इस धन की फाँसी को तोड देगा तो अनेक तरह के ज्ञान की फाँसीयाँ आकर गले मे पडती है और कोई ज्ञान की भी फाँसी काट डालेगा, तो संसार के केबत की फाँसी गले मे है,कि लोग मुझे क्या कहेगे? यह केबत की फाँसी है । इस प्रकार से ये सभी फाँसी कोई तोड देगा तो उसे तो यह पद प्रकट हो जायेगा । ।।५२।।

लोक लाज कुळ जात को ।। डर नही माने कोय ।।
तो पासी आ टूट गी ।। रहो भावे जांहा जोय ।।
रहो भावे ज्याहां जोय ।। गुरू बिन रेस न काई ।।
तो पासी सब दूर ।। अेक नही वा गळ भाई ।।
सुखराम सतगुरू रिजीयाँ ।। सब फंद दूरा होय ।।

लोक लाज कूळ जात को ।। डर नही माने कोय ।।५३।।

लोक लाज के डर की फासी मोकली कर दी,कुल के डर की फासी काट डाली,जात के डर की फासी तोड दी इसप्रकार सभी फासीयाँ तुटके दूर हो गयी अब गले में एक भी फासी नही रही इसकारण सतगुरु और शिष्य में अंतर नही रहा ऐसा शिष्य उसे जहाँ चाहना है वहाँ रहा तो भी उसे कोई डर नही है। इसलिये आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज ज्ञानी,ध्यानी,जगतके नर नारीयो को कह रहे है की,माया की सभी प्रकार की फासीयाँ काटने पे ही वह शिष्य सतगुरुको अपना निजमन दे सकता। सतगुरुको निजमन देते ही सतगुरु का निजमन शिष्य पे प्रसन्न होता। शिष्य पे सतगुरु का निजमन प्रसन्न होते ही शिष्यके घट में सतस्वरुप याने नेअंछर याने निजनाम याने अखंड्ति ध्वनी याने सतशब्द याने आनंदब्रम्ह प्रगट होता। वह सतशब्द शिष्य के कर्म काटता,कर्म काटके काल मारता, पाच आत्मासे हंस को मुक्त कराता,मन को त्रिगुटीमें हंससे अलग करा देता,मन और ५ आत्माको हंससे अलग कराके मायाको मार देता और वह स्वयम् हंसके घटमें बैठ जाता और हंसको भारी भारी अनेक प्रकार के सुख देता। जिस सुख की नकल इस सृष्टी में नही है। ऐसे सुख सदा वहाँ फुकट में विना कष्टसे देते रहता। इसलिये आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज सभी जगत के लोगो को समज दे रहे है कि,हिरा सरीखा मनुष्य देह मिला है,सतगुरु भी मिले है,ऐसे सतगुरु को अपना निजमन देकर सतगुरु मेहेर करा लो तो होनकाल के सभी फंद दूर हो जायेंगे ।।।५३।।

।। इति सतगुरू मेहर को अंग संपूरण ।।